ISSN (p):2394-3912
ISSN (e):2395-9369
त्रैमासिक 5 (4), अक्टूबर–दिसम्बर, 2018
मूल्य : 40 रुपये

कहार

जन विज्ञान की बहुभाषाई पत्रिका

KAHAAR

A multilingual magazine for common people

छायांकन : आशीष तिवारी द्वारा

प्रकाशक

प्रोफेसर एच्. एस. श्रीवास्तव फाउण्डेशन फॉर साइंस एण्ड सोसाइटी, लखनऊ

(www.phssfoundation.org)

सह-प्रकाशक

पृथ्वीपुर अभ्युदय समिति, लखनऊ

(www.prithvipur.org)

सोसायटी फार इन्वायरमेन्ट एण्ड पब्लिक हेल्थ सेफ, लखनऊ

विवेकानन्द युवा कल्याण केन्द्र, पडरौना कुशीनगर

An International Conference Jointly Organized by Assam Agricultural University Jorhat and PHSS Foundation Lucknow on Climate Change, Biodiversity and Sustainable Agriculture (ICCBSA-2018)

Prof. H.S.Srivastava Foundation for Science and Society and Assam Agriculture University, Jorhat jointly organized an International conference during 13-16 December, 2018 at AAU, Jorhat (Assam). The conference was attended by more than 1000 participants from various countries including India, Bangladesh, Nepal, Philippines, African countries, Europe and USA etc. Total 24 Technical Sessions including Young Scientist Conclave were organized successfully. The Conference recommended for conservation of terrestrial and aquatic ecosystems as well as a fast incorporation of adaptation, mitigation and resilience measures to cope with climate change related crisis towards sustainable development.

प्रधान संपादक
प्रोफेसर राणा प्रताप सिंह, लखनऊ

सम्पादक
डॉ. राम स्नेही द्विवेदी, लखनऊ
डॉ. सीमा मिश्रा, लखनऊ
डॉ. संजय द्विवेदी, लखनऊ

सम्पादक मण्डल
डॉ. वेद प्रकाश पाण्डेय, बालापार, गोरखपुर
प्रोफेसर सूर्यकान्त, लखनऊ
प्रोफेसर रिपु सूदन सिंह, लखनऊ
डॉ. चतुर्भुज सिंह सेंगर, पडरौना
डॉ. अर्चना (सेंगर) सिंह, न्यूजर्सी
डॉ. रामचेत चौधरी, गोरखपुर
श्री रामकिशन नैन, रोहतक
श्री आकाश वर्मा, लखनऊ
श्री नन्दकिशोर गुप्ता, देवघर
डॉ. वेंकटेश दत्ता, लखनऊ
श्री कार्तिक, कोटा, हैदराबाद

सलाहकार मण्डल
प्रोफेसर प्रहलाद के. सेठ, लखनऊ
प्रोफेसर प्रफुल्ल वी. साने, जलगाँव
प्रोफेसर रामदेव शुक्ल, गोरखपुर
श्री राम प्रसाद मणि त्रिपाठी, गोरखपुर
प्रोफेसर शशि भूषण अग्रवाल, वाराणसी
प्रोफेसर देवेन्द्र प्रताप सिंह, लखनऊ
डा. मथुरा राय, लखनऊ
प्रोफेसर ओम प्रभात अग्रवाल, रोहतक
डॉ. एस.सी. शर्मा, लखनऊ
डॉ. रूद्रदेव त्रिपाठी, लखनऊ
प्रोफेसर रणवीर दहिया, रोहतक
प्रोफेसर राजा वशिष्ठ त्रिपाठी, वाराणसी
प्रोफेसर एन. रघुराम, दिल्ली
डॉ. सुधा वशिष्ठ, लखनऊ
डॉ. सिराज वजीह, गोरखपुर
प्रोफेसर हरीश आर्य, रोहतक
डा. उमा शंकर सिंह, लखनऊ
श्री शशि शेखर सिंह, लखनऊ
डॉ. सुमन कुमार सिन्हा, गोरखपुर
प्रोफेसर मालविका श्रीवास्तव, गोरखपुर
डॉ. निहारिका शंकर, नोएडा
श्रीमती शीला सिंह, लखनऊ
सुश्री दीपा कुमारी, रोहतक
श्री रमाशंकर सिंह, दुदही
श्री हरगोविन्द मिश्र, धर्मपुर पर्वत
श्री उपेन्द्र प्रताप राव, दुदही
इं. तरूण सेंगर, गिलबर्ट, अमेरिका
डॉ. पूनम सेंगर, चण्डीगढ़
श्री अविनाश चन्द्र जैसवाल, दुदही
डॉ. कुलदीप बौद्ध, राँची
श्री दीनबन्धु जायसवाल, दुदही
डॉ. संजीव कुमार, लखनऊ

आवरण फोटो
श्री आशीष कुमार तिवारी, आई एफ एस, लखनऊ

प्रबन्ध-सम्पादक
डॉ. ललित अग्रवाल, लखनऊ
श्री अंचल जैन, लखनऊ

तकनीकी सहयोग
श्री रंजीत शर्मा, लखनऊ
श्री योगेन्द्र प्रताप सिंह, लखनऊ
श्री मनोज कुमार, लखनऊ

सपादकीय पता
04, पहली मंजिल, एल्डिको एक्सप्रेस प्लाजा, शहीद पथ उतरटिया, रायबरेली रोड, लखनऊ-**226025** भारत
ई-मेल : **kahaarmagazine@gmail.com**
cceseditor@gmail.com
वेबसाइटः **www.kahaar.in**
https://www.facebook.com/kahaarmagazine

सहयोग राशि	व्यक्तिगत	संस्थागत
एक प्रति	: **40** रूपये	**100** रूपये
वार्षिक	: **150** रूपये	**350** रूपये
त्रैवार्षिक	: **400** रूपये	**1000** रूपये

सहयोग राशि 'प्रोफेसर एच्.एस. श्रीवास्तव फाउण्डेशन फॉर साइंस एण्ड सोसायटी, लखनऊ' के नाम भेजें। बैंक खाते के विवरण के लिए ईमेल लिखें : **phssoffice@gmail.com**

घोषणा

लेखकों के विचार से 'कहार' की टीम का सहमत होना जरूरी नहीं है। किसी रचना में उल्लेखित तथ्यात्मक भूल के लिए 'कहार' की टीम जिम्मेदार नहीं होगी।

लेखकों के लिए

वैचारिक रचनाओं में आवश्यक संदर्भ भी दें एवं इन संदर्भों का विस्तार रचना के अन्त में प्रस्तुत करें। अंग्रेजी रचनाओं का हिन्दी तथा हिन्दी सहित अन्य भाषाओं की रचनाओं का अंग्रेजी या हिन्दी में सारांश दें। मौलिक रचनाओं के साथ रचना के स्वलिखित, मौलिक एवं अप्रकाशित होने का प्रमाणपत्र दें। रचनाओं के साथ लेखक अपना पूरा पता, ई-मेल, **English Abstract (50-60 word)** और पासपोर्ट साइज फोटो भी भेंजे। रचनाऐं **English** में **Times New Roman (12Point)** तथा हिन्दी के लिए कुर्ति देव **10** में **MS-Word** में टाइप करें। तस्वीरें, चित्र, रेखाचित्र आदि **TIF/JPG/PDF Format** में भेंजे।

विज्ञापन के लिए

विज्ञापन की विषय वस्तु के साथ ही भुगतान 'प्रोफेसर एच्.एस.श्रीवास्तव फाउण्डेशन फॉर साइंस एण्ड सोसाइटी, लखनऊ' के नाम मल्टीसिटी चेक या बैंक ड्राफ्ट द्वारा सम्पादकीय पते पर भेजें।

रूपये **6,000/-** पूरा पृष्ठ रूपये **4,000/-** आधा पृष्ठ (सादा)
रूपये **10,000/-** पूरा पृष्ठ (रंगीन) रूपये **6,000/-** आधा पृष्ठ (रंगीन)

Advertisement Tariff

Please send payment in form of DD or multicity cheques in favour of "Professor H.S. Srivastava Foundation for Science and Society" Payable at Lucknow alongwith subcription forms or Advertisement draft.
Rs. 6000/- Full Page (B/W)Rs. 4000/-Half Page (B/W)
Rs. 10,000/-Full Page (Color) Rs. 6,000/- Half Page (Color)

'कहार' एक पारम्परिक मनुष्य वाहक के लिए प्राचीन देशज सम्बोधन है। 'कहार' की तरह ही यह पत्रिका ज्ञान विज्ञान की जानकारियों एवं लोगों के बीच सेतु बनाने की कोशिश कर रही है।

विषय-सूची

क्र स	विषय	लेखक	पृष्ठ स०
01	अज्ञानता, उपेक्षा और दिशाहीन विकास से उपजा है, प्रदूषण	राणा प्रताप सिंह	01
02	Pollution is the poison produced by Ignorance and wrong Management of development	Rana Pratap Singh	02
03	रसायनिक पेस्टीसाइड्स का प्रयोग और मौत के आँकड़े	रामकठिन सिंह	03
04	जीनान्तरित फसलें एवम् भविष्य की संम्भावनाऐं	आर एस सेंगर, मनोज कुमार शर्मा, आलोक कुमार सिंह एवम् आशीष पाण्डेय	07
05	Better management of Ganga is needed to avoid contamination during religious activities	Sanjay Dwivedi, Seema Mishra and Lalit Agrwal	11
06	ओयेस्टर मशरूम की उत्पादन तकनीक	गोपाल सिंह, अमरपाल सोम एवम् आर एस सेगंर	15
07	Prospects and opportunity of milky mushroom in India	Gopal Singh, Mohit, Sonu Katiyar and R. S. Sengar	18
08	उत्तर प्रदेश के आम के बागों के पोषक तत्वों का मूल्याकंन	तरूण अदक,घनश्याम पान्डें, विनोद कुमार सिंह एवम् कैलाश कुमार	22
09	Improving livelihood of farmers through technology demonstration	Tarun Adak, Anand Kumar Singh, Subhash Chandra, Arvind Kumar and Vinod Kumar Singh	26
10	जैव उर्वरक का प्रयोगः कृषक आय दोगुना करने में सहायक	रणधीर नायक, आर. के. सिंह, यस. के. यादव एवम् एल.सी. वर्मा	27
11	प्रदूषण और पर्यावरणीय मूल्य	मोहम्मद इक़बाल	30
12	Glimpses of human created Agri-Biodiversity in Tasmania (Australia)	R. C. Chaudhary	32
13	What you are breathing?	Priya Singh and Omkar	33
14	ग्राम देवता –तिकड़म के तीन छोर	रामदेव शुक्ल	37
15	गंगा का महत्व	संजय द्विवेदी एवम् सीमा मिश्रा	39
16	प्रदूषण के जैव सूचक	विष्णु कुमार, अमित कुमार एवम् संजय द्विवेदी	40
17	धन्वन्तरि वाटिका : आयुर्वेदीय औषधि पौधों की वाटिका	संजय द्विवेदी एवम् सीमा मिश्रा	45

संपादकीय

अज्ञानता, उपेक्षा और दिशाहीन विकास से उपजा है, प्रदूषण

विज्ञान और तकनीकी के बढ़ने के साथ पूरे विश्व में औद्यौगिकीकरण को पुराने जनजातीय कबीलों एवं समूहों में बटें और सामंती परम्पराओं में बँधे मानव समाज के विकास के नये दौर की तरह माना गया। इस दौर के औद्यौगिक आन्दोलन के रूप में यूरोपीय पुर्नजागरण काल को एक नये युग की शुरूआत की तरह देखा गया। प्राकृतिक स्रोतों के स्वरूपों को बदल कर नये–नये पदार्थ और उनसे निर्मित अनेकों तरह की बेंची जाने लायक वस्तुएँ उत्पादित कर उनका बाजार खड़ा करने के लिए उन वस्तुओं के तरह तरह के उपयोग ढूँढे गये।

तब शायद वैज्ञानिकों, नियामकों, शासकों एवं उद्यौगपतियों एवं उनके प्रबंधन को पर्यावरणीय चक्र के विषाक्त होने, क्षरित होने एवं खण्डित होने के खतरों की सही पहचान नहीं थी। सूक्ष्म जैविकी और पर्यावरण विज्ञान के विकास के बाद यह समझ में आने लगा कि पृथ्वी और प्रकृति के संचालन की एक प्राकृतिक व्यवस्था है, जो पृथ्वी पर जीवन के संरक्षण एवं विकास के लिए अत्यंत आवश्यक है। हमें समझ आने लगा कि पृथ्वी का एक जैवीय तंत्र है, जिसमें हरे पौधे जमीन एवं वायु से पानी, हवा से कार्बन डाई ऑक्साइड तथा सूर्य से ऊर्जा अवशोषित करके पानी की काई से लेकर घासों, झाड़ियों, वृक्षों, लताओं आदि की पत्तियों में कार्बनिक भोज्य पदार्थ बनाते हैं, जिनमें पदार्थ और ऊर्जा संचित हो जाते हैं। इस प्रक्रिया में पानी से ऑक्सीज़न विखण्डित कर वायु में पुनः डाल दी जाती है। जिसे श्वसन के लिए सभी जीव इसी ऑक्सीजन का इस्तेमाल करते हैं। सभी जीव इन्हीं कार्बनिक पदार्थों को खाद्य के रूप में प्रयोग में लाते हैं। तथा फिर से श्वसन की क्रियाओं द्वारा पानी एवं हवा से प्राणवायु ऑक्सीजन को अवशोषित कर उन खाद्य पदार्थों को विखण्डित कर लेते हैं, जिससे पदार्थ और ऊर्जा मुक्त हो जाते हैं। बचे हुये उत्सर्जित या सड़े गले पदार्थ जो पशुओं और मनुष्य के लिए भोज्य नही है, फिर से सूक्ष्म जीवों द्वारा विखण्डित किए जाते रहते हैं, तथा उनसे निकली ऊर्जा सूक्ष्मजीवों के जीवन के तमाम कार्यों को संपादित करती है। मनुष्यों, पशुओं, पक्षियों और कीड़े–मकोड़ें सहित सभी जन्तु मूलतः हरे पौधों द्वारा निर्मित इस कार्बनिक भोजन एवं इस प्रक्रिया में मुक्त की गयी प्राणवायु ऑक्सीजन के सहारे ही जीवन यापन करते हैं।

सभी बेकार वस्तुओं तथा पदार्थों को मिट्टी, पानी, वायु एवं तमाम संरचनाओं पर उपस्थित सूक्ष्म जीव (सामान्यतया बैक्टीरिया और फफूँद कुल के जीव) विखिण्डित कर देते हैं, जिससे कचरे की सफाई भी होती रहती है। प्रकृति में करोड़ों वर्षों में पौधों ने भोजन बनाने, जंतुओं ने भोजन पचाने और सूक्ष्मजीवों ने बेकार वस्तुओं को सड़ाने की जैविक क्षमता विकसित की है। फिर इन सब में एक–दूसरे पर निर्भर होने का परस्पर सम्बन्ध विकसित किया है, जो पृथ्वी के पर्यावरण तंत्र की मूल ताकत है। ये क्षमताएँ किसी जीव में अचानक विकसित नहीं हो सकती। ऐसी कोई मशीन हमारे पास नही है जो यह काम कर सके।

औद्यौगिक युग में रसायन शास्त्रियों ने प्राकृतिक पदार्थों की संरचनाओं को समझ कर उनके अलग–अलग संयोगों से कारखानों में अनेकों तरह के हज़ारों–हजार नये पदार्थ रोज बनाना शुरू कर दिया। उसमें से इक्का–दुक्का पदार्थ उद्यौगों के रास्ते सामान बनकर बाजारों में पहुँचे, बाकी सब कचरे में बहा दिये गये। इनको पचाने की क्षमता अचानक न तो सूक्ष्मजीवों में पैदा हो सकती, न पौधों में, न ही जंतुओं, पशुओं या मनुष्य में। इसलिए यह औद्यौगिक कचरा ज़हर बनकर हमारे मिट्टी, पानी और हवा के युगों–युगों से विकसित एवं संचित प्राकृतिक स्वरूपों को अचानक बिगाड़ने लगा है। यह कचरा सूक्ष्मजीवों, पेड़–पौधों एवं जन्तुओं, पक्षियों, पशुओं और मनुष्य के शरीर में पानी, हवा एवं खाद्य पदार्थों के रास्ते पहुँच कर उनके जीवन चर्या को भीतरी तौर पर नष्ट करने लगा है। कुछ सूक्ष्मजीवों एवं पौधों ने तो इन्हें अपने भीतर स्थित थैलियों में जमाकर कम नुकसान के साथ बाहर निकाल देने की क्षमता विकसित कर ली है, परन्तु पशुओं और मनुष्य जैसे जटिल प्रकृति के जीवों में इस तरह की क्षमताएँ नहीं विकसित हो पा रही हैं। फलतः हमारी बहुत बड़ी आबादी लगातार प्रदूषण से होने वाली जानी–अनजानी बीमारियों से त्रस्त हैं।

लाभ कम हो जाने के डर से औद्यौगिक तंत्र और अपने पूर्वाग्रहों के कारण ऐन केन प्रकारेण तेज आर्थिक विकास के दुराग्रह से ग्रस्त शासन एवं प्रशासन तथा इन खतरों से अनजान या इन्हें नज़र अंदाज करने वाली जनता ने एक ऐसा विकास तंत्र खड़ा कर लिया है, जो प्रकृति, पशु और मनुष्य सभी को जहरीला करता जा रहा है। यह भविष्य के बहुत बड़े खतरे की घण्टी है जिसे हम सुन नही पा रहे हैं। इसे नियंत्रित एवं प्रतिबंधित नही किया गया तो बीमारीयाँ इसी तरह बढ़ती जायेंगी। अस्पताल और डॉक्टर कम पड़ते जायेंगे। वनस्पतियाँ, कीड़े–मकोड़े, पशु–पक्षी और सभी जीव धीरे–धीरे समाप्त होते चले जायेंगे। पृथ्वी का जीवन नष्ट हो जायेगा तो इस दूँठ और बेरस धरती का हम क्या करेंगे? इस दौलत का क्या करेंगे, जिसके लिए इतनी आपाधापी मचा रखी है, सबने? ये आज के सबसे अधिक विचारणीय और तात्कालिक प्रश्न है, जिनका हमें उत्तर ढूँढ़ना है।

राणा प्रताप सिंह
ईमेलः cceseditor@gmail.com

Editorial

Pollution is the poison produced by ignorance and wrong management of development

With the emergence of science and technology, industrialization of the whole world was seen as a new dynasty of human society which was then divided into group of tribes and was culturally bound to the feudal systems. Evolution of the European Renaissance was recognized as a new era of liberation and development of tribal, feudal and agrarian societies into more organized Industrial and Urban societies. The industries are based on utilization of natural resources to create new products for market. When it was considered as social and scientific revolution perhaps the scientists, regulators, rulers, industrialists and their management could not identified an accurate identity of the dangers of toxication, corrosion and fragmentation of the environmental cycle.

After the development of science of micro-organism and ecology a sophisticated environmental balance in nature was realized. It came to understanding that there is a nature's system for the operation of earth and the biosphere, which have evolved with specific purpose during the uncountable years with evolution of life on the earth. These natural relations of resources and life on the earth are very essential for the protection and development of life. The mother Earth has a vibrant biological system. Green plants absorb water from soil, and air, carbon dioxide from air and energy from the solar lights and prepare organic food in their leaves. The green algae leaves of grasses, shrubs, trees etc. make organic substances in which the matter and energy are bound as food. In this process, oxygen is liberated from the water and enrich air, which is used to breath all the creatures for respiration. The remaining organic matter left over by animals and plants are further degraded by the micro-organisms. This energy is the key for all the activities of life on the earth. The microbes live on this organic food produced by the green plants. They respire due to free oxygen released in the process by food formation by the plants.

The micro-organisms present in the soil, water, air and all the living and dead structures biodegrade the dead organisms and organic matter for their energy or establish them self in living cells for their food and cause diseases. In millions of years nature has developed biological ability in plants to make organic food, in animals to digest food and in microorganisms to degrade and destroy waste products. Different living organisms have also developed a relation between them which is the core force of the earth's ecosystem. These abilities cannot be developed suddenly in an organism. We do not have such man made machines to convert toxic industrial discharges into useful products and the technologies available are expensive and not in practice by most of the industrial setups.

In the industrial era, chemists started composing thousands of new substances everyday by understanding the structures of natural matter and developed their different combinations to produce a marketable product. To develop one product they throw out 1000 other chemical combination and new chemicals in nature through the waste pipes. As resultant one chemical from the industries goes successful to get converted in the marketable product and reach to the markets, the rest shed in the garbage and cause pollution. The ability to digest them cannot suddenly arise in microorganisms, plants, animals or human beings. Therefore, the industrial garbage become a poison that start to erode the ever-evolved natural forms of the earth's system and accumulated in soil, water and air. It reaches in the body of microorganisms, plants, birds, animals and human beings from water, air and food and start destroying the life of those organisms. Some microorganisms and plants have developed the ability to put them in the vacuoles located inside them and to expel them with less damage. But such capabilities are not evolving in the complex nature of animals like livestock and human beings and they are getting ill and dying due to these poisonous pollutants. As a result, our very large population is constantly suffering with unhealthiness and diseases caused by pollution.

Due to the ignorance and pressure of fast industrialization, The government and executive governance are still denying the crisis of release of poisons and industrial products in form of xenobiotic chemicals in air, water, soil and biosphere. The regulations are not getting realized on the ground adequately due to lack of dependable and accountable monitoring and open access audit systems. The efforts are getting restricted to the files and folders and the environmental crisis of pollutants released outside or moving in bulk to destroy the ecosystems of soil rivers, tributaries, nalas, lakes, ponds etc. The polluted rivers are polluting the oceans and we are unable to do anything meaningful. It needs an awareness, care, concerns and well planned mitigation strategies.

Rana Pratap

Rana Pratap Singh

कीटानाशक प्रदूषण

रासायनिक पेस्टीसाइड्स का प्रयोग और मौत के आँकड़े

❑ रामकठिन सिंह

The chemical pesticides have been using since long in agricultural fields and the continuous use of these pesticide causing not only pollution in environment but also multiple diseases in human, even death. Although the government has already banned many of the dangerous pesticides but due to lack of knowledge these pesticides are freely available in market for sale. Government is trying to reduce the use of pesticide by running several social awareness programs and giving some technical suggestions to formers like clean cultivation, identification of friendly insects, use of bio fertilizers, etc. By implementing all these suggestions the effect of pesticides on environment and human health can be reduced.

रासायनिक पेस्टीसाइड्स अर्थात् कृषि–रक्षा रसायनों का प्रयोग जैसे मौत का पर्यायवाची बनता जा रहा है। पर किसान है कि उन्हें छोड़ने को तैयार नहीं है। वह सोचता है, यदि समय पर पेस्टीसाइड छिड़की नहीं गयी, तो उसकी फसल बरबाद हो जायेगी। इस तरह एक तरफ पेस्टीसाइड के प्रयोग से जुड़ी मौतों की कहानियाँ हैं, तो दूसरी तरफ इससे जुड़ी है फसल सुरक्षा की गारण्टी का विश्वास। रासायनिक पेस्टीसाइड्स से इतने बड़े स्तर पर होने वाली मौतें मेरे लिए कौतूहल का विषय बनी हुई हैं। पिछले दिनों तमाम ऐसी मौतों की खबर महाराष्ट्र से आयी थीं, जहाँ कपास की खेती बड़े पैमाने पर की जाती है और पेस्टीसाइड के प्रयोग का चलन भी अधिक है। मेरा ख्याल है कि पेस्टीसाइड छिड़कने वाला व्यक्ति यदि आवश्यक सावधानियाँ नहीं बरतता है, तब तो यह सम्भव है कि उसे पेस्टीसाइड से कुछ नुकसान होगा, पर मृत्यु हो जायेगी इसकी सम्भावना नगण्य लगती है। हाँ, यदि किसी ने पेस्टीसाइड ही पी लिया या खा लिया तब तो अलग बात है। 31 अक्टूबर, 2017 के 'दि टाइम्स ऑफ इण्डिया' अखबार में एक खबर छपी थी। उसमें लिखा था कि महाराष्ट्र के विदर्भ क्षेत्र में जितनी भी मौतें पेस्टीसाइड्स के प्रयोग के कारण बतायी गयीं, डॉक्टरों ने जब उनके खून और विसरा की जांच की, तो उनमें पेस्टीसाइड्स के ट्रेसेज तक नहीं मिले। यवतमाल जिले के मेडिकल कॉलेज ने 8 अक्टूबर, 2017 तक की शिकायतों के आधार पर 22 बिसरा और 150 खून के नमूने टेस्ट किये थे और किसी भी सैम्पुल में पेस्टीसाइड्स के अवशेष नहीं पाये गये। इस रिपोर्ट से यह जाहिर होता है कि उनमें से ज्यादातर मौतें पेस्टीसाइड्स से नहीं हुई थीं। खैर! इस विवाद में न पड़कर चलिए, हम देखते हैं कि पेस्टीसाइड्स से होने वाले नुकसान को किस तरह से कम–से–कमतर किया जाय, जिससे किसान की जान बच जाय और उसकी फसल का नुकसान भी न हो। यहाँ मेरा उद्देश्य कोई तकनीकी आलेख लिखने का नहीं है, पर चूंकि मैं वर्षों से कृषि–व्यवसाय–शोध और प्रचार–प्रसार से जुड़ा रहा हूँ, अतः मैं अपने उन्हीं अनुभवों के आधार पर इस विषय पर कुछ प्रकाश डालने का प्रयास करूँगा।

हाँ, तो चलिए अब जरा विचार करें कि ऐसे कौन–कौन से उपाय हैं जिनसे पेस्टीसाइड का प्रयोग कम–से–कम हो तथा किसानों को इनके प्रयोग से मौत का सामना न करना पड़े। पेस्टीसाइड के सही प्रयोग सम्बन्धित तमाम ऐसी बातें हैं, जिनके विषय में किसानों को ज्ञान अवश्य होना चाहिए। पहली बात तो यही है कि ऐसी कई पेस्टीसाइड्स हैं जिन्हें सरकार ने बैन कर रखा है। इन पेस्टीसाइड्स की लिस्ट समय–समय पर समाचार–पत्रों में भी निकलती रहती है। किन्तु इसके बावजूद ये पेस्टीसाइड्स धड़ल्ले से बाजार में बिक रही हैं और किसान इनका प्रयोग कर रहे हैं, क्योंकि वे इस बात से सर्वथा अनभिज्ञ हैं कि ये पेस्टीसाइड्स बैन हैं और आत्मघाती हैं। खेद की बात यह है कि कई प्रदेश सरकारों के कृषि–विभागों द्वारा भी ऐसी पेस्टीसाइड्स खरीदी और बेंची जा रही हैं। अक्सर देखा गया है कि जिले स्तर पर कार्यरत् कृषि अधिकारियों को इनकी जानकारी न होने से वे किसानों को इनके प्रयोग की संस्तुति करते रहते हैं। यही हाल कृषि–विज्ञान केन्द्रों के ज्यादातर वैज्ञानिकों का भी है। अब यदि इन लोगों तक को पेस्टीसाइड्स के बैन होने की जानकारी नहीं है तो स्थानीय व्यापारियों और किसानों को कैसे होगी? अतः ये दवाएँ धड़ल्ले से खरीदी–बेंची जा रही हैं। इस विषय में सख़्त कदम उठाने की आवश्यकता है। ऐसी दवा विक्रेताओं व सप्लायरों के साथ सख़्ती के साथ निपटने की जरूरत है। एक कदम जो तुरन्त उठाना आवश्यक है वह यह कि बैन की गयी दवाओं के पोस्टर्स कृषि–विभाग और कृषि–विज्ञान केन्द्रों के दफ्तरों में लगवाए जांय। साथ ही

पता : 1, देवलोक कालोनी, चर्चरोड, विष्णुपुरी, अलीगंज, लखनऊ–226022, E-mail: rksingh.neford@gmail.com Mob - 9721719736

स्थानीय दवा विक्रेताओं की दुकानों में इन पोस्टर्स को लगाना अनिवार्य कर देना चाहिए, ताकि उन्हें इनका ज्ञान हो और वे ऐसी दवाएँ अपनी दुकानों में न रखें, साथ ही दवा लेते समय किसान भी अपनी दवाओं के नाम इस पोस्टर में दी गयी बैन दवाओं के नाम से मिलान कर लेंगे और गलत दवा प्रयोग करने से बच सकेंगे।

पेस्टीसाइड का कम–से–कम प्रयोग कैसे किया जाए यानि इसकी आवश्यकता को कमतर कैसे किया जाय?, इस पर तमाम वैज्ञानिकों ने समय–समय पर तकनीकी सुझाव दिये हैं। कुछ सुझाव शस्य विधियों से सम्बन्धित है, जैसे–

1. **ग्रीष्म ऋतु में मोल्ड–बोल्ड हल से खेत की गहरी जुताई :** इससे खेत की परतों के नीचे दबे–छिपे कीड़े–मकोड़े, उनके अंडे–बच्चे सब ऊपर आ जाते हैं तथा उनमें से अधिकतर चिड़ियों द्वारा खा लिये जाते हैं और शेष गर्मी की तपती धूप से मर जाते हैं। खेत के खर–पतवार भी समाप्त हो जाते हैं तथा उन पर पाये जाने वाले कीड़े उनके अंडे/सूड़ियाँ, कृमिकोष आदि भी नष्ट हो जाते हैं। इस तरह खेत में फसल उगने के समय कीड़े–मकोड़ों की प्रारम्भिक संख्या बहुत कम हो जाती है और फसलों का नुकसान भी कम हो जाता है।

2. **'क्लीन–कल्टीवेशन' यानि साफ–सुथरी खेती।** इस विधि में फसलों को पंक्तियों में लगाते हैं और खेत में उगने वाले खर–पतवारों को निकालकर समाप्त कर दिया जाता है। साफ–सुथरी खेती में कीड़ों या बीमारियों का प्रकोप बहुत कम होता है, क्योंकि खर–पतवार बहुत से कीड़े एवं बीमारियों के पोषक होते हैं।

3. अक्सर खेतों के चारों तरफ मेड़ों पर तमाम घासें उगी रहती हैं जिनकी आड़ में कीड़े–मकोड़े अपने अंडे–बच्चे देते हैं जो खेत में फसल आने पर उड़ कर उन पर आ जाते हैं और नुकसान पहुँचाते हैं। इसी तरह बहुत–सी बीमारियों के स्पोर भी इन खर–पतवारों पर पनपकर बाद में मुख्य फसल को हानि पहुँचाते हैं। अतः फसल उगाने से पहले इन खर–पतवारों को खुरपी, हँसिया अथवा खर–पतवार नाशकों द्वारा नष्ट कर दिया जाना चाहिए, ताकि कीड़े–मकोड़े एवं बीमारियों के स्पोर समाप्त हो जांय।

4. खाद का संतुलित प्रयोग तथा उचित जल–प्रबंधन भी कीड़ों और बीमारियों की संख्या को कम करने में मददगार होते हैं।

5. संस्तुत समय पर बुवाई/रोपाई करने पर भी बहुत–सी बीमारियों/कीड़े–मकोडों की समस्या से काफी हद तक निजात पाया जा सकता है।

6. कीट एवं बीमारी अवरोधी फसलों की प्रजातियों के लगाने से भी बहुत–सी बीमारियों एवं कीड़े–मकोड़ों की समस्याएँ काफी हद तक कम हो जाती हैं।

स्पष्ट हैं कि उक्त क्रियाओं द्वारा कीड़े–मकोडों एवं बीमारियों की समस्याएँ काफी कम हो जाती हैं और फसलों पर पेस्टीसाइड छिड़कने की जरूरत भी कम हो जाती है। इन चन्द शस्य–विधियों के अतिरिक्त कुछ और भी तकनीकी विधियाँ हैं जिन्हें अपनाकर कीड़े–मकोड़ों तथा बीमारियों की समस्या से निजात पायी जा सकती है। इनका सूक्ष्म विवरण नीचे दिया गया है–

1. पहली विधि है 'फेरोमोन ट्रैप' का प्रयोग। फेरोमोन ट्रैप को 4–5 फीट लम्बे बांस के डण्डे पर ऊपर लटकाकर डण्डे को खेत के बीचोबीच स्थापित कर दिया जाता है। फेरोमोन एक ऐसा पदार्थ है जो कीड़े–मकोड़ों को अपनी ओर आकर्षित करता है। प्रत्येक कीड़े के लिए अलग–अलग फेरोमोन तथा ट्रैप का प्रयोग किया जाता है। वह खेत जिसमें फेरोमोन ट्रैप लगा होता है उसमें पाये जाने वाले कीड़ों के अतिरिक्त, आसपास के दूसरे खेतों से भी कीड़े खिंचे चले आते हैं। अधिकतर फेरोमोन नर–कीड़ों को आकर्षित करते हैं। जो उसमें मिले हुए कीटनाशी से मर जाते हैं। परिणामस्वरूप मादा–कीट प्रजनन नहीं कर पाते और इस तरह कीड़ों की संख्या फसलों की आर्थिक–क्षति–स्तर तक नहीं पहुँच पाती। कुछ फेरोमोन में कीटनाशी नहीं मिले हुए होते। अतः उनमें ट्रैप हुए कीटों को मारना पड़ता है। कभी–कभी वे धीरे–धीरे स्वयं ही मर जाते हैं। अच्छा तो यह रहता है कि पूरे सिवान में थोड़ी–थोड़ी दूरी पर ऐसे कई ट्रैप लगा दिये जांऐ, ताकि पूरे सिवान में खेतों पर फैले कीड़े ट्रैप होकर मर जांऐ। यदि ऐसा किया जाता है, तो किसानों को किसी प्रकार की दवा छिड़कने की जरूरत नहीं पड़ेगी। इस सम्बन्ध में किसानों में आपसी सहयोग अत्यन्त आवश्यक है।

2. दूसरी तकनीकी विधि 'एकीकृत जीवनाशी प्रबंधन' अथवा 'समेकित जीवनाशी प्रबंधन' के नाम से जानी जाती है। यह विभिन्न क्रियाओं (प्रैक्टिसेज) का एक पैकेज होता है, जो गर्मी में खेत की गहरी जुताई से शुरू होता है और स्वस्थ एवं कीट–रोग अवरोधी प्रजातियों का चयन, बीज–शोधन से होता हुआ साफ–सुथरी खेती, संतुलित मात्रा में खाद तथा समुचित सिंचाई का प्रयोग, आवश्यकता पड़ने पर कीटनाशी दवाओं के प्रयोग आदि तक जाता है। इस विधि को अपनाने पर पेस्टीसाइड के प्रयोग की जरूरत बहुत कम हो जाती है। और यदि जरूरत पड़ती भी है तो आवश्यकता अनुसार ही दवाओं का प्रयोग किया जाता है। अच्छा तो यह रहता है कि किसान रासायनिक पेस्टीसाइड डालने की बजाए, वानस्पतिक स्रोत से प्राप्त पेस्टीसाइड का प्रयोग करें। इससे कीड़े भी मर जाएँगे और दवा छिड़कने वाले व्यक्ति को कोई नुकसान भी नहीं होगा। इस तरह आप देख सकते हैं कि उक्त दोनों तकनीकी विधियों के प्रयोग से कीड़ों की संख्या सीमित की जा सकती है, जिससे रासायनिक दवाइयों के प्रयोग की आवश्यकता स्वतः कम हो जाती है। समेकित कीट प्रबन्धन का प्रयोग यूँ तो सभी फसलों के कीट प्रबंधन हेतु उत्तम विधि है, पर सब्जी की फसलों में इसका प्रयोग अत्यावश्यक समझा जाता है, क्योंकि सब्जी का हर भाग–पत्ती, फल, डंठल या जड़, सभी खाया जाता है और उन पर रसायनिक खादों का प्रयोग न हो तो स्वास्थ्य के लिए हितकर होगा।

3. **मित्र–कीटों की पहचान एवं रख–रखाव** : यहाँ एक अन्य बात जिसे जान लेना अत्यन्त आवश्यक है कि प्रकृति में ऐसे कई कीट पाये जाते हैं जो हानिकारक कीड़ों के अंडे–बच्चों को खा जाते हैं और इस तरह हानिकारक कीड़ों की संख्या कम हो जाती है। इन्हें मित्र–कीट कहा जाता है। इसीलिए जैविक–कीट प्रबंधन में मित्र–कीटों का खासतौर से बहुत महत्त्व होता है। सनद रहे कि पेस्टीसाइड के अंधाधुन्ध प्रयोग से हानिकारक कीटों के साथ–साथ कई ऐसे मित्र–कीट भी मर जाते हैं। कई संस्थानों ने मित्र–कीटों को पालने की विधि भी निकाली है। यदि किसान चाहें तो मित्र–कीटों की बढ़ोत्तरी के उपाय सीख सकते हैं।

4. **जैविक कीट–नाशकों का प्रयोग** : कीट प्रबंधन में पौधों से प्राप्त रसायनों का बहुत महत्त्व है, क्योंकि ये कीटों के शत्रुओं के लिए कम हानिकारक होते हैं तथा कीट–प्रबंधन में सहायक सिद्ध हुए हैं। वानस्पतिक स्रोत वाले कीटनाशी तैयार करने हेतु मुख्यतः चार तत्वों (पाइरिथ्रम, निकोटीन, रोटेनोन और नीम से बने पदार्थ या इनके तत्व) का प्रयोग होता है, जो अलग–अलग पेड़–पौधों से प्राप्त किये जाते हैं। अकेले नीम से बनी लगभग चालीस कीटनाशक दवाएँ विभिन्न नामों से बाजार में उपलब्ध हैं, जिनमें 'अचूक' 'गोल्ड नीम' 'नीम गॉर्ड', 'सुपर गॉर्ड', निम्बेसाइडिन आदि अधिक पापुलर हैं। ऐसी पेस्टीसाइड्स के प्रयोग से कीट तो मर जाते हैं, परन्तु इनका विपरीत प्रभाव दवा छिड़कने वाले व्यक्ति, पौधों या मिट्टी पर नहीं पड़ता। रासायनिक कीटनाशकों की तुलना में ये पेस्टीसाइड्स सस्ते भी पड़ते हैं।

एक और बात जो ध्यान देने योग्य है, वह यह है कि प्रथम श्रेणी के कीट जो बड़ी संख्या में खेत में स्पष्ट रूप से दिखायी देते हैं और फसलों को नुकसान पहुँचाते हैं, जिनके लिए किसान रासायनिक कीटनाशक का प्रयोग करता है, उनके अतिरिक्त दूसरी श्रेणी के कुछ कीट भी होते हैं जो अमूमन कम सक्रिय तथा जिनकी संख्या सामान्यतः कम होती हैं और उनसे फसलों का नुकसान भी कम होता है। अक्सर देखा गया है कि पेस्टीसाइड के अंधाधुन्ध प्रयोग से प्रथम श्रेणी के कीट जब समाप्त हो जाते हैं, तब निष्क्रिय पड़े दूसरी श्रेणी के कीटों की संख्या बढ़ जाती है और इनसे होने वाला नुकसान भी बढ़ जाता है। इसलिए पेस्टीसाइड के प्रयोग के समय इस बात को भी ध्यान में रखना जरूरी होता है।

अब थोड़ी बात पेस्टीसाइड प्रयोग करने की विधि के बारे में भी कर ली जाय। अक्सर देखा जाता है कि स्प्रे मशीनें ठीक नहीं होतीं या नॉजल का चयन सही नहीं होता। ऐसी मशीनों से छिड़काव करने पर दवा का नुकसान तो होता ही है, दवा छिड़कने वाले व्यक्ति पर भी इसका कुप्रभाव पड़ता है। इसलिए जरूरी है कि दवा छिड़कने से पहले मशीन की किसी जानकार व्यक्ति से जाँच करा ली जाय और उनकी खामियाँ दूर कर ली जांय। दवा छिड़कने वाले व्यक्ति को भी कुछ सावधानियाँ बरतने की जरूरत पड़ती है। एक तो उसकी पोशाक ऐसी हो जिससे उसका सारा शरीर ढका हुआ हो। अच्छा रहता है यदि ऊपर से एप्रन भी पहन लिया जाय, ताकि किसान के कपड़ों पर पेस्टीसाइड्स की छीटें न पड़ें। साथ ही हाथ में दस्तानें, मुँह पर मास्क और सिर ढका हुआ होना चाहिए। ऐसा करने से दवा छिड़कने वाले व्यक्ति पर दवा का कोई असर नहीं होता। दवा छिड़कते समय एक और बात का ध्यान रखना जरूरी है वह यह कि हवा के रूख के विपरीत दवा कदापि न छिड़की जाय, अन्यथा दवा उड़कर उल्टे छिड़कने वाले व्यक्ति पर आ गिरेगी। कहने का अर्थ यह है कि यदि किसान उक्त सभी सावधानियाँ बरतें तो उनको पेस्टीसाइड्स के प्रयोग से कोई नुकसान नहीं होगा और न ही मौत की खबरें आएँगी।

आलेख समाप्त करने से पहले एक सवाल का जवाब ढूँढना जरूरी है, कि पेस्टीसाइड के प्रयोग से होने वाली मौतों का जिम्मेवार आखिर कौन है? सरकार या पेस्टीसाइड बनाने वाली कम्पनियाँ या इसे बेचने वाले व्यापारी अथवा किसान खुद! इस प्रश्न का उत्तर ढूँढ़ने से पहले किसान द्वारा पेस्टीसाइड प्रयोग की पूरी प्रक्रिया को समझ लेना ठीक रहेगा। मान लीजिए, किसान कपास की खेती करता है तो वह सबसे पहले बीज/प्रजाति का चयन करता है। बतातें चलें कि प्रजातियों का चयन भी पेस्टीसाइड के प्रयोग को कम करने में मदद करता है। जैसे– बीटी कॉटन पर बॉल–वॉर्म कीड़े नहीं लगते या बहुत कम लगते हैं और फसल को नुकसान नहीं पहुँचा पाते। इसलिए बीटी कॉटन पर दवा का छिड़काव बहुत कम और आवश्यकतानुसार ही किया जाता है। ध्यान रहे कि कभी–कभी बीटी कॉटन पर बॉल–वॉर्म के अतिरिक्त अन्य कीड़ों का प्रकोप भी हो जाता है। ऐसी दशा में उपयुक्त तथा आवश्यक कीटनाशक का प्रयोग करना जरूरी हो जाता है। अक्सर देखा गया है कि प्रजाति के चयन में किसान सजग नहीं होता। कभी–कभी तो वह किसी वैज्ञानिक से सलाह ले लेता है, पर ऐसा कम ही होता है। खैर! किसान ने फसल लगाई और फसल धीरे–धीरे खेत में बढ़ने लगी। एक समय आता है जब किसान को अपने खेत में कुछ कीट दिखाई देने लगते हैं। वह बेचैन हो उठता है। बिना कुछ सोचे–समझे वह सीधे स्थानीय व्यापारी के पास भागता है और उससे कहता है कि उसके खेत में कीड़े लग गये हैं, उसे कोई दवा चाहिए जिससे उसके खेत के कीड़े मर जाएँ! न तो व्यापारी पूछता है कि कौन–सा कीड़ा लगा है या यह कि क्या उनकी संख्या 'आर्थिक क्षति स्तर' से अधिक हो गयी है कि उसमें दवा डालने की जरूरत पड़ती दिख रही है, न ही किसान ही उसे ये सब बातें बताना जरूरी समझता है। वैसे भी व्यापारी कोई वैज्ञानिक तो होता नहीं, उसके पास जो भी कीटनाशक दवा होती है वह उसे दे देता है, बिना यह परवाह किये कि वह दवा उसके खेत में लगे कीट के लिए प्रभावी होगी या नहीं। कभी–कभार दवा काम कर भी जाती है, किन्तु अक्सर दवा का प्रयोग बेकार ही जाता है तथा उससे होने वाली क्षति चाहे पौधों को हो, मिट्टी की हो अथवा दवा छिड़कने वाले व्यक्ति को हो, बढ़ जाती है। बतातें चलें कि हर कीट के लिए

वैज्ञानिकों ने एक 'आर्थिक क्षति स्तर' निर्धारित कर रखा है और यह बताया गया है कि जब खेत में कीटों की संख्या उस स्तर से ज्यादा हो, तभी कोई दवा छिड़कनी चाहिए अन्यथा नहीं। दूसरी बात, अक्सर किसान को पेस्टीसाइड छिड़कने के लिए आवश्यक सावधानियों के बारे में भी पता नहीं होता। न तो वह पूरी पोशाक पहनता है, न पैरों में जूते, न हाथों में दस्ताने, न मुँह पर मास्क और न ही वह अपना सिर ढकता है। कई बार तो उसे यह भी पता नहीं होता कि दवा का छिड़काव हवा के विपरीत दिशा में नहीं करना चाहिए अन्यथा पेस्टीसाइड्स के घोल उड़कर उसके ऊपर आ जाते हैं। स्प्रे मशीन का ठीक न होना भी दवा की क्षमता के साथ–साथ दवा छिड़कने वाले व्यक्ति को भी प्रभावित करता है। अब आप खुद सोचिए! यदि इस प्रक्रिया को अपनाने से किसान को नुकसान होता है तो इसमें सरकार या पेस्टीसाइड बनाने वाली कम्पनियाँ अथवा अन्य किसी का क्या दोष? दोष तो खुद किसान का है जो कपास की खेती तो करता है, पर कपास की खेती के बारे में पूरी जानकारी नहीं रखता। यदि वह प्रयास करे तो इसमें मुश्किल कुछ भी नहीं है। कृषि–विज्ञान केन्द्रों के वैज्ञानिकों से लेकर, कृषि–विभाग के अधिकारियों तथा विश्वविद्यालयों के वैज्ञानिकों तक सभी किसानों की मदद करने के लिए सर्वथा तैयार रहते हैं। कुछ साल पहले भारत सरकार ने 'कॉल सेन्टर' बनवाये थे जिनसे आवश्यक सूचनाएँ मिल जाती थीं। अब वे ही सेन्टर 'विडियो कॉनफेरेन्सिंग सेन्टर' में बदल दिये गये हैं। उत्तर प्रदेश में यह सेण्टर कानपुर में स्थित है। उसका हेल्पलाइन नम्बर 18001801551 है। इस पर कॉल करके किसान अपनी किसी भी समस्या का समाधान प्राप्त कर सकते हैं। ऐसी हेल्पलाइन्स हर प्रदेश में मौजूद हैं। खेत में कीड़े/बीमारी लगने पर अच्छा तो यह होगा कि कीड़े/बीमारी से ग्रसित पूरा पौधा निकाल कर किसान पास के कृषि–विज्ञान केन्द्र अथवा कृषि–विभाग के कार्यालय पर जाकर वैज्ञानिकों से उसके निदान का सही–सही हल प्राप्त करें। यदि वहाँ जा पाना संभव न हो, तो खेत में लगे कीड़ों की फोटो खींचकर कृषि-विज्ञान केन्द्र अथवा विडियो कॉनफेरेन्सिंग सेण्टर पर भेजकर सही-सही जानकारी प्राप्त की जा सकती है। सेन्टर पर बैठे वैज्ञानिकों को यह बताना भी जरूरी है कि खेत में कीड़े/बीमारी का स्तर क्या है? यानि कितने प्रतिशत पौधों पर कीड़े लगे हैं। अच्छा तो यह होता है कि एक वर्ग मीटर के पौधों पर लगे कीट की संख्या गिन कर वैज्ञानिकों को बताएँ ताकि वे निर्धारित कर सकें कि दवा छिड़कने की जरूरत है भी या नहीं। कई बार किसान अनायास ही छिड़काव पर छिड़काव करता जाता है और अपना नुकसान करता रहता है। जैसा ऊपर बताया गया है, वैज्ञानिकों ने हर कीट के लिए 'आर्थिक क्षति स्तर' निर्धारित कर रखा है और यह ताकीद भी की गयी है कि आर्थिक क्षति स्तर से कीटों की संख्या कम होने पर दवा का छिड़काव कतई न किया जाय। यहाँ यह सब बताने का मेरा मतलब सिर्फ यह है कि किसान जिस किसी भी फसल की खेती करता है, तो उसे उस फसल के लिए खेत की तैयारी से लेकर बीज-शोधन, खाद का प्रयोग, जल प्रबंधन, फसल सुरक्षा आदि तक की पूरी जानकारी रखना आवश्यक है। यदि कोई किसान ऐसा नहीं करता है, तो वह अपनी खेती के लाभ-हानि का जिम्मेदार खुद है, न कि कोई अन्य। हाँ, यह जरूर है कि जहाँ ऐसी फसलों की खेती होती है जिनमें पेस्टीसाइड का प्रयोग ज्यादा होता है जैसे कपास, गन्ना या सब्जी, उन क्षेत्रों के किसानों को सघन प्रशिक्षण के द्वारा खेती के गुर सिखाने चाहिए और किसानों को भी मन लगा कर इन प्रशिक्षणों से अधिक–से–अधिक लाभ प्राप्त करना चाहिए।

उपर्युक्त से स्पष्ट है कि ज्यादातर दुष्परिणाम किसानों के पास सही जानकारी न होने के कारण होते हैं। अतः खेती सम्बन्धी खासकर पेस्टीसाइड के प्रयोग के सम्बन्ध में विशेष जागरूकता अभियान चलाने की जरूरत है। निश्चय ही इसमें बुद्धिजीवियों, मीडिया, गैर–सरकारी संस्थाओं आदि की भूमिका अहम् हो सकती है। व्यर्थ के एक्टीविज्म, धरना प्रदर्शन और सरकार को गरियाने से किसानों का तनिक भी फायदा होने वाला नहीं है। बल्कि गाँव-गाँव में कैम्प लगाकर, जरूरत पड़ने पर वैज्ञानिकों की मदद लेकर, किसानों को पेस्टीसाइड के सही प्रयोग तथा उनसे होने वाले लाभ–हानि का ज्ञान कराना ज्यादा लाभकर होगा। वानस्पतिक स्रोतों की पेस्टीसाइड्स के प्रयोग के विषय में विशेष पैरवी करने की जरूरत है, ताकि रासायनिक पेस्टीसाइड्स का प्रयोग भविष्य में कम-से-कम हो। स्कूलों, पंचायत घरों तथा अन्य प्रमुख स्थानों पर पोस्टर लगाये जाए तथा हैण्ड–आउट्स वितरित किये जाए। प्रिंट और मीडिया भी जागरूकता फैलाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। स्पष्ट है कि जब किसान जागरूक होगा और उसके पास पूरी जानकारी होगी तो वह निश्चय ही पेस्टीसाइड के दुरूपयोग से बचेगा और उससे होने वाली क्षति भी कम होगी। और फिर पेस्टीसाइड्स से होने वाली मौतों की खबरें भी नहीं आएँगी। तो, आइये इस सम्बन्ध में कुछ करने का संकल्प लें और आगे बढ़ें! किसानों का असली ख़ैरख्वाह बनें!

किसान फसल पर कीटनाशक घोल का छिड़काव करते हुए

कृषि प्रौद्योगिकी

जीनान्तरित फसलें एवं भविष्य की संम्भावनाऐं

❑ आर.एस.सेगर, मनोज कुमार शर्मा,
आलोक कुमार सिंह एवं आशीष पाण्डेय

Scientifically transgenic plants are proved to be useful for food security & sustainable agriculture. Indian Government has developed many plant biotechnology laboratories for strong research in this area. The abiotic and biotic resistant with good economic valued plants can be developed by transgenic technology. The discovery of new agronomically important genes is primary step for developing new transgenic. Many transgenic crops are already developed like cotton, mustard, brinjal, tomato etc. Transgenic microbes have also been developed to control disease causing agent and nitrogen fixation. Transgenic plants are also developed which are more efficient in photosynthesis and respiration. Transgenic is a present time need in respect to increasing world population.

अन्य विकसित देशों की तरह हमारे देश ने भी जीनान्तरित फसलों के विकास में जैव प्रौधोगिकी की एक रणनीति को वैज्ञानिक निवेश के रूप में पहचान की है जो कि खाद्यान्न सुरक्षा, पोषाहार सुरक्षा और ज्यादा टिकाऊ कृषि में योगदान का वादा करती है। तद्नुसार भारत सरकार ने विज्ञान व प्रौद्योगिकी मंत्रालय में जैव प्रौद्योगिकी विभाग के आण्विक जीव विज्ञान के छह केन्द्रों की स्थापना की ताकि देश में पादप जैव प्रौद्योगिकी अनुसंधान को बढावा मिल सके। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के विभिन्न अनुसंधान संस्थानों एवं कृषि विश्वविद्यालयों में कृषि पर मुख्य रूप से अनुसंधान किया जाता है। देश के विभिन्न अनुसंधान केन्द्रों में अब जीनान्तरित फसलों के विकास पर विशेष जोर दिया जा रहा है। जैव प्रौद्योगिकी की नयी–नयी तकनीकों का प्रयोग फसलों में कीट–व्याधियों के प्रति प्रतिरोधक क्षमता, वातावरणीय प्रतिकूल स्थितियों के प्रति सहिष्णुता व लाभदायक तत्वों से युक्त फसलों के विकास में किया जा रहा हैं। भविष्य में जीनान्तरित फसलों द्वारा उत्पादकता को बढ़ाने के साथ–साथ किसानों द्वारा कीट रसायनों पर व्यय होने वाले करोड़ों रुपयों के नुकसान को व पर्यावरण को प्रदूषित होने से बचाया जा सकेगा।

नए जीन्स की तलाश :

जीनान्तरित फसलों के विकास के लिए पहली आवश्यकता नये–नये जीनों व प्रमोटरों के रुप में होती है। प्रतिरोधक क्षमता वाले नये–नये जीन्स को विभिन्न स्रोतों से पृथक कर, उनके आण्विक गुणों का निर्धारण करके, उन्हें आवश्यकतानुसार स्थानीय किस्मों में स्थानान्तरित किया गया है। इस प्रकार से नये जीनों के साथ स्थानीय उच्च पैदावार वाली किस्मों को व्याधियों व वातावरणीय प्रतिकूल स्थितियों के प्रति सहिष्णु बनाया जाता है। ऐसी विकसित फसलों को ही जीनान्तरत फसलें कहा जाता है। केन्द्र ने पादप मूल व जीवाणुओं के जीनों को प्रयोग करते हुए कीटों व पीड़क जन्तुओं, सूखा, ठण्ड, लवणता के प्रति सहिष्णुता पैदा करने के लिए एक रणनीति तैयार की है। इसके तहत प्रोटिएज निरोधक और लेक्टिन प्रोटिन जीनो को देशी दलहनी फसलों से पृथक किया गया है। इन जीनों का प्रयोग विभिन्न फसलों में अनेक प्रकार की कीट प्रजातियों को नियंत्रित करने में किया जा सकता है। लेक्टिन फलियों के बीजों में पर्याप्त मात्रा में पाये जाने वाले विषमजातीय कार्बोहाइड्रेट को बांधने वाले प्रोटीन होते हैं। इनका प्रभाव रससूचक कीटों के आहारनाल की एपीथिलियम में मौजूद ग्लाइकोप्रोटीन पर होता है और बाद में पोषक पदार्थों के अवशोषण में कमी के कारण कीटों की मृत्यु हो जाती हैं। प्रोटिएज निरोधक पौधों द्वारा तैयार किये जाने वाले छोटे प्रतिरक्षात्मक प्रोटीन होते हैं। जिसके द्वारा सामान्यतः उनके वृद्धि व विकास के लिये अनिवार्य अमीनो एसिड आती है और परिणाम स्वरूप उनकी मृत्यु हो जाती है।

इसी तरह से बैसिलस थूरिनजिएन्सिस (बी.टी.) जीवाणु से क्राईजीनों के पृथक्करण का कार्य भी केन्द्र में चल रहा है। बी.टी. जीवाणु में पायी जाने वाली कवन्त्रित प्रोटीन अत्यधिक कीट नियंत्रित करती है। ये प्रोटीन कीटों को नियंत्रित करती है। ये प्रोटीन कीटों के मिडगट के दोनों रिसेप्टर अणुओं से जुड़ें रहते हैं और कीटों को कमजोर करके अन्ततः उन्हें नष्ट कर देते हैं। बी.टी. जीवाणुओं में क्राई प्रोटीन के निर्माण के लिये आवश्यक क्राई जीनों को पहचानकर उन्हें पृथक करके जीन बैंक में जमा कराया गया है। इन जीनों का प्रयोग कपास, चना, अरहर, मसूर, धान, मूंगफली, बैंगनी व टमाटर आदि फसलों में जीवनाशी व कीट प्रबंधन के लिये

पताः कृषि जैव प्रौद्योगिकी विभाग, सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ
E-mail: sengar065@gmail.com

किया जा सकता है।

प्राकृतिक आपदाओं से टकराती जीन्स–फसलों को सूखा, अत्यधिक मृदा नमी, मृदा में उच्च लवणता जैसी प्रतिकूल स्थितियों का सामना करना पड़ता है। इन प्रतिकूल स्थितियों से फसलों को बचाने के लिये हमारे केन्द्र ने महत्वपूर्ण जीनों की पहचान कर उन्हें विभिन्न स्रोतों से पृथक कर लिया है तथा इन जीनो को जीन बैंक में जमा कर दिया गया है जिससे इनका प्रयोग प्रतिकूल स्थितियों में सहिष्णु जीनान्तरित फसलों के विकास में किया जा सके। केन्द्र द्वारा पृथक किये गये जीनों को खासतौर से सूखे के प्रति सहिष्णु फसलों के विकास में प्रयोग किया जा रहा है। यद्यपि सूखे के प्रति सहिष्णुता एक जटिल विषय है, फिर भी इसे विकसित करने के लिये विभिन्न शरीर क्रिया विज्ञानी और जैव रासायनिक क्रिया विधियों को समन्वित रूप से इस तरह लगाया जाता है जिसके द्वारा पौधे सूखे को सहन करने में सक्षम हो जाते हैं।

विकसित जीनान्तरित फसलें :

जीनान्तरित कपास : भारत में पहली बार सन् 2002 में बी.टी. कपास के रुप में एक मात्र जीनान्तरित फसल को 45,000 हेक्टेयर में उगाया गया था। यह क्षेत्र अब बढ़कर सन् 2017 में लगभग 11 मिलियन हैक्टयर हो गया है। इस प्रकार से जीनान्तरित फसलों का हमारे देश में बढ़ता क्षेत्रफल किसानों में जैव प्रौद्योगिकी को अपनाने के प्रति विश्वास प्रदर्शित करता है। राष्ट्रीय पादप जैव प्रौद्योगिकी केन्द्र, नई दिल्ली ने बी.टी. जीनान्तरित कपास का विकास कर लिया है। इसके तहत स्थायी किस्म बीकानेरी नरमा में बी.टी. जीन स्थानान्तिरत कराया गया है। इसके टी–1, टी–2 स्तर पर परीक्षण सफल पाये गये हैं तथा इसे सुण्डी (फलछेदक) के प्रति सहिष्णु पाया गया है। वर्तमान में बीकानेरी नरमा में बायोसेफ्टी परीक्षण चल रहे हैं तथा बी. टी. कपास के बड़े पैमाने पर बहुक्षेत्रमय परीक्षण यूनिवर्सिटी ऑफ एग्रीकल्चरल साइंस धारवाड़ के साथ देश के अन्य विभिन्न स्थानों पर इस वर्ष किए जाएंगे।

सुनहरी सरसों : खाद्य तैलीय फसलों में सरसों की उत्पादकता दर को बढ़ाने के लिये राष्ट्रीय पादप जैव प्रौद्योगिकी केन्द्र, पूसा, नई दिल्ली ने ऊतक संवर्धन प्रौद्योगिकी का प्रयोग कर उच्च उपज देने वाली नई किस्म 'पूसा जय किसान' को सन् 1994 में ही विकसित कर लिया था। यह देश में जैव प्रौद्योगिकी द्वारा विकसित पहली किस्म है जिसकी उत्पादकता दर दूसरी लोकल किस्मों से 20–25 प्रतिशत अधिक है तथा यह माहू प्रतिरोधी किस्म है जो गुजरात, राजस्थान व महाराष्ट्र के लिये जारी की गयी है। एक और किस्म पूसा गोल्ड (पीली सरसों) को 1947 में इसी प्रौद्योगिकी संस्थान द्वारा विकसित किया गया तथा इसे पश्चिम बंगाल, बिहार, उड़ीसा तथा पूर्वी उत्तर प्रदेश के लिये जारी किया गया। इसके साथ-साथ केन्द्र ने सरसों में कई नर बंद्य क्रम वंश (रिस्टोरर) का विकास किया है। इनका प्रयोग सरसों में उत्पादकता बढ़ाने के लिये विभिन्न संकरों (हाइब्रिडस) के विकास में सहायक होगा।

जीनान्तरित सरसों : फसल उत्पादकता पर सूखे व लवणता के प्रतिकूल प्रभाव से निपटने के लिये जीनान्तिरत सरसों विकसित कर ली गई है। इसका विकास कन्सट्रैक्टिव सी ए वी 35 एस प्रमोटर के नियंत्रणाधीन आस्मोटिन जीन की अति अभिव्यक्ति से किया गया है। जीनान्तरित पौधों का आण्विक व शरीर क्रिया विज्ञानी स्तर पर विश्लेषण किया जा चुका है।

जीनान्तरित बैंगन : बैंगन, भारत व दक्षिण–पूर्वी एशिया में सबसे अधिक उगाई जाने वाली खाद्य सब्जी है। यह फसल, फल व बैंगन प्ररोह जैसे नाशक जीवों के प्रति बहुत संवेदनशील है तथा इसकी रासायनिक रोकथाम काफी खर्चीली है और असरदार भी नहीं है। रा. पा.जै.प्रौ., पूसा, नई दिल्ली ने बी टी के एक डेल्टा एंडोटोक्सिन (क्राई 1 एफ ए–1) जीन का निर्माण किया तथा इसे एक शक्तिशाली प्रमोटर (सी ए एम वी 35 एस) के नियन्त्रण में बैंगन की किस्म पूसा पर्पल लोंग में डालकर जीनान्तरित बैंगन का विकास कर लिया है। यह जीनान्तरित बैंगन प्ररोह व फल छेदक के प्रति सहिष्णु पाया गया है। केन्द्र द्वारा विकसित इस जीनान्तरित बैंगन में फल क्षति 4–7 प्रतिशत थी जबकि सामान्य बैंगन की 35–43 प्रतिशत थी। अभी इस बैंगन की क्षेत्रीय जांच देश के कई स्थानों पर चलायी जा रही है। इस सामग्री को सरकारी व निजी भागीदारी के तहत बीजो शीतल नामक निजी कंपनी को लाइसेंस पर दिया गया है।

जीनान्तति टमाटर : देश में इस समय ऑसमोटिन व एंटीसेंस ए सी सी सिन्थेज जीनों को पूसा रूबीव पूसा उपहार किस्मों में स्थानांतिरत करने का कार्य चल रहा है। इन जीनान्तरित टमाटरों को फाइटोट्रोन में टी– 1 व टी–2 स्थिति में उगाया जा रहा है। ये जीनान्तरित टमाटर उच्च लवणता व देर से पकने के लिये सहिष्णु पाये गये हैं। इससे पत्तियों में प्रकाश संश्लेषण उन्नत दर पर होता है। पौधों की बढ़वार अधिक होती है और फल भी बड़े–बड़े व अधिक भार वाले होते हैं। आशा है कि केन्द्र द्वारा विकसित ये जीनान्तरित पूसा रुबी व पूसा उपहार टमाटर देश के लवण प्रभावित क्षेत्रों में उच्च कोटि की उपज देंगे व कटाई उपरान्त होने वाले नुकसान को कम करेंगे तथा प्रसंस्करण कार्यों के लिये उपयुक्त हो सकेंगे।

आण्विक मार्कर चयन :

पादप प्रजनकों द्वारा कठिन गुणों की वंशानुगतता के लिये चयन प्रक्रिया में तेजी लाने में मार्कर सहाय–चयन व आण्विक प्रजनन की महत्वपूर्ण भूमिका है। केन्द्र में हाल ही में आण्विक मार्करों का उपयोग करते हुये जीवाणं अंगमारी के प्रति सहिष्णु 'उन्नत पूसा बासमती –1' नामक नई किस्म का विकास किया है। इस किस्म का विकास जीवाणु अंगमारी को वहन करने वाले दो जीनों एक्स ए 13 तथा एक्स ए 21 को स्थानान्तरित करके मार्कर की सहायता से किया गया है। कई सस्य विज्ञानी परीक्षणों के बाद इस वंशक्रम (किस्म) को केन्द्रीय किस्म निर्मुक्ति समिति ने पंजाब, दिल्ली, उत्तराखण्ड तथा जम्मू एवं

कश्मीर राज्यों में व्यवसायिक खेती के लिए सन् 2007 में अधिसूचित किया है। यह मार्कर सहाय चयन (एम ए एस) के माध्यम से देश में विकसित पहली किस्म है। इसके साथ ही केन्द्र ने डी एन ए को वर्गीकृत करने के लिये आर एफ एल पी, आर ए पी डी,एस टी एम एस, आई. एस. एस.आर.और ए एफ एल पी जैसी विधियों का उपयोग कर धान की 120, गेहूं की 140 और सरसों की 42 प्रजातियों के डी एन ए फिंगंर प्रिंट तैयार कर लिये हैं। इनका प्रयोग विभिन्न किस्मों के वांछित लक्षणों की पहचान में किया जा सकता है। यह राष्ट्रीय स्तर पर किस्मों की पहचान व संरक्षण के लिये उपयोगी होने जा रहा है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के विभिन्न अनुसंधान संस्थानों में कृषि पर मुख्य रुप से अनुसंधान किया जाता है। परिषद के विभिन्न अनुसंधान केन्द्रों में अब जीनान्तरित फसलों के विकास पर विशेष जोर दिया जा रहा है। जैव प्रौद्योगिकियों का प्रयोग फसलों में कीट–व्याधियों के प्रतिकूल स्थितियों के प्रति सहिष्णुता व पुष्टिकर तत्वों से युक्त फसलों के विकास में किया जा रहा है। इसी के तहत राष्ट्रीय पादप जैव प्रौद्योगिकी अनुसंधान केन्द्र की स्थापना सन् 1985 में पूसा कैम्पस, नई दिल्ली में की गई।

जीनान्तरित सूक्ष्म जीवाणुओं का विकास

रा.पा.जै.प्रौ., पूसा, नई दिल्ली में अति सूक्ष्म जीनान्तरित जीवाणुओं के विकास पर भी वैज्ञानिक का एक समूह कार्य कर रहा है। अति सूक्ष्म जीवाणुओं को सिंथेसिस मिश्रण के रुप में जाना जाता है। जिनके द्वारा सभी कृषि पारिस्थितिकी प्रणाली में पादप रोग जनकों को प्राकृतिक रुप से नियंत्रित किया जाता है। आनुवंशिक अभियांत्रिकी के व्यापक प्रयोग से अब यह संभव है कि फफूंद की प्रतिरोधी क्षमता वाले जीनों को पृथक कर लक्षित रोगजनकों के विरुद्ध ऐसे जीनों को द्विगुणित कर बेहतर इस्तेमाल किया जा सके। देश के विभिन्न भागों से मिट्टी लेकर सीरियल डाइलूसन तकनीक द्वारा अति सूक्ष्म जीवाणुओं को अलग करके उन पर अनुसंधान कार्य चल रहा है। इसके साथ ही नाइट्रोजन स्थिरीकरण के सक्षम उत्प्रेरक प्रभेदों तथा राइजोबियम साइसर के उन्नत नोड़्यूल संबंधित विपथन की पहचान कर ली गयी है।

भारतीय धान जीनोम अनुक्रमण पहल

अंतरर्राष्ट्रीय चावल जीनोम अनुक्रमण परियोजना जापान के नेतृत्व में 1998 में प्रांरभ की गयी थी। लगभग 1000 करोड़ रुपये लागत वाली इस परियोजना में जापान, अमेरिका, ताइवान, चीन, फ्रांस, भारत, दक्षिण कोरिया, थाइलैण्ड, ब्राजील तथा बिट्रेन के 250 वैज्ञानिकों ने भाग लिया और 'जापोनिका' समूह के धान की एक प्रजाति 'निपोनबरे' के जीनोम का अनुक्रमण किया। भारत में धान जीनोम अनुक्रमण के कार्य को राष्ट्रीय पादप जैव प्रौद्योगिकी केन्द्र, नई दिल्ली तथा दिल्ली विश्वविद्यालय के दक्षिण परिसर के वैज्ञानिकों ने मिलकर किया। गुणसूत्र संख्या 11 में रोग प्रतिरोधक क्षमता पैदा करने वाले अनेक जीन विद्यमान पाये गये तथा कुल मिलाकर दोनों केन्द्रो ने 150 लाख बेस पेयर का अनुक्रमण कार्य किया। इन बेस पेयरों से निर्मित धान के लगभग 56,000 जीनों की पहचान कर ली गयी है। भारत ने इस परियोजना में अपने लक्ष्य को निर्धारित समय की सीमा से पूर्व पूरा कर लिया था। धान के जीनोम की संपूर्ण जानकारी उपलब्ध होने के साथ ही महत्वपूर्ण कार्य करने वाले जीनों के खोज की प्रतिस्पर्धा विश्व स्तर पर प्रांरभ हो चुकी है। रा.पा.जै.प्रो.पूसा. नई दिल्ली ने 'वंशानुधान' व डाटाबेस नामक सरलता से प्रयुक्त होने वाला एक आंकड़ा संग्रह विकसित किया है जिसमें धान के 56/298जीनों/ वंशाणुओं की पूरी जानकारी दी हुई है।

खेती में जान फूक रही है जैव प्रौद्योगिकी

विश्वविद्यालय में पिछले वर्ष आयोजित किसान मेला में कृषि महाविद्यालय के स्टॉल पर जैव प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा प्रदर्शन की गई किसान उपयोगी तकनीक की जानकारी प्रदेश के विभिन्न भागो से आये किसानो ने ली। विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक डॉ आर.एस. सेगंर ने बताया कि जैव प्रधौगिकी तकनीकी के कारण कई क्षेत्रों में क्रातिकारी परिवर्तन आये है। इस प्रौद्योगिकी के महत्व को देखते हुये कृषि में इसका उपयोग काफी हो रहा है। कृषि क्षेत्र में जैव प्रौद्योगिकी के द्वारा किसी भी फसल के पौधों के गुणों को अब और अधिक उपयोगी बनाया जा सकता है इस तकनीक की सहायता से ही पौधों की प्रकाश संश्लेषण और श्वसन की क्षमता में वृद्धि कर अधिक उपज प्राप्त की जा सकती है। बायोटैक्नोलॉजी के मदद से दलहनी पौधा (फ्रेंचवीन) व तिलहनी पौधे (सूरजमुखी) के जीन्स को मिलाकर नया पौधा (सरबीन) तैयार किया गया इसी प्रकार पोमेटो का विकास हुआ। खाद्य पदार्थों के उत्पादन से लेकर उनके भण्डारण तक तथा जूट, तिलहन, दलहन, गुड़ तथा चमड़ा, लाख, रेशम के कीडे, वन औषधियों व जडी बूटीयों के रखरखाव एवं किस्मों के सुधार व संरक्षण के लिये वायोटैकन्लॉजी का महत्व सर्वोपरि है। देश में अभी भी फील्ड ट्रॉयल की मंजूरी दी गई है, उनमें गेहूं, धान, मक्का और ज्वार के साथ कई फसलों की जी एम किस्में शामिल हैं एक तबके का मानना है कि भारत की खाद्य सुरक्षा को बरकरार रखने के लिए इन फसलों को बढ़ावा देना जरूरी है, वहीं एक बड़ा वर्ग ऐसा भी है, जो इन फसलों को स्वास्थ्य और पर्यावरण के लिए खतरनाक मानता है। हाल ही में कृषि मंत्रालय ने जी एम फसलों के फील्ड ट्रायल की मंजूरी सुप्रीम कोर्ट से मांगी है। लेकिन अभी तक मंजूरी के अभाव में जी.एम. फसलों के फील्ड ट्रायल हमारे देश में प्रारम्भ नहीं हो सके हैं।

क्या हैं जी एम फसलें :

जी एम फसल यानी जेनेटिकली मॉडिफाइड क्रॉप्स। इन्हे जेनेटिक इंजीनियरिंग की मदद से लैब में उनके जीन्स में बदलाव करके तैयार किया जाता है। इन्हें 'बायोटेक' अथवा 'बीटी' फसलों के नाम से भी जाना जाता है। इनके विकास का उद्देश्य किसी फसल को ज्यादा उत्पादन वाला बनाना होता है। साथ ही फसलों को बीमारियों,

बी.टी. कपास

बी.टी. बैगन

कीट–पतंगों, सूखे, पाले और खारे पानी आदि से बचने की क्षमता से भी लैस करना होता है। इससे फसलों के स्वाद और रंग में बदलाव किया जा सकता है और उनके आकार में भी परिवर्तन लाया जा सकता है।

क्यों है जरुरत :

वैज्ञानिकों का कहना है कि जिस रफ्तार से दुनिया की आबादी बढ़ रही है, उसे देखते हुए 2050 तक आज की तुलना में लगभग 50 प्रतिशत अधिक खाद्य पदार्थो की जरुरत होगी। इस जरुरत को परंपरागत फसलों के दम पर पूरा नहीं किया जा सकता, दुनिया में सबसे पहले 1982 में तंबाकू का जी एम प्लांट विकसित किया गया था। 1986 में इसके अमेरिका और फ्रांस में ट्रॉयल भी किए गए।

देश में क्या हैं हालात :

देश में ऐसे संगठनों और वैज्ञानिकों की बड़ी तादाद है, जो जी एम फसलों को स्वास्थ्य के लिए खतरनाक मानते हैं। उनका कहना है कि बिना इस बात की तसल्ली के कि जी एम फसलें स्वास्थ्य और पर्यावरण के लिए सुरक्षित हैं इनके कार्मसियल उत्पादन की मंजूरी नहीं दी जानी चाहिए। इस मामले में बुद्धदेव आचार्य की अगवाई वाली कृषि संबंधी संसदीय समिति ने हाल में ही अपनी रिपोर्ट में सरकार को आगाह किया था कि वह जी एम फसलों के मामले में कतई जल्दबाजी न करें। भारत ने अब तक देश में गैर खाद्य फसल बी टी कॉटन ने कार्मसियल उत्पादन की मंजूरी दी है। इसके बाद देश में विकसित किए गए बी टी बैंगन को उसने अभी तक हरी झंडी नही दिखाई है।

दूसरे देशों में जी. एम. फसलों की स्थिति :

अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया और यूरोप के कई देश जी एम फसलों पर लगातार काम कर रहे हैं। अमेरिका में अभी जी एम मक्का, सोयाबीन, राई, कपास और चुकन्दर आदि लगभग 8 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्र में उगाए जा रहे हैं और इनका इस्तेमाल भी किया जा रहा है। वर्ष 2022 तक कृषि उत्पादकता को दुगना करने के लिये जरुरी है कि जी.एम. फसलों के प्रयोगात्मक परिक्षण सफल होने के बाद मंजूरी दी जाये।

मौसम परिवर्तन के साथ ट्रांसजेनिक फसलों से भविष्य में लाभ होगा :

जीन प्रसंस्कृत फसलों अथवा ट्रासजेनिक फसलों को अपनाना ही अनिश्चित जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों से निपटने में मददगार साबित हो सकता है और यही भविष्य का रास्ता है। बैंगन हो या आलू, चावल हो या फिर टमाटर जलवायु परिवर्तन से निपटने तथा देश की खाद्य सुरक्षा को पूरा करने के लिये ट्रांसजेनिक कल्चर वक्त की मांग है। जीन प्रसंस्कृत (जी–एम) चावल चार–पाँच वर्षो में वाणिज्यिक उत्पादन के लिये तैयार होगा।

जेनिटिकिली मोडिफाइड फसलों से फायदे :

- बढती आबादी का पेट भरने के लिये बड़ी मात्रा में उत्पादन संभव
- फसलों को कीड़ो और रोगों से मुक्ति अतः किसानों का फायदा
- फसलों को कीटनाशकों की जरुरत नहीं पड़ती पर्यावरण को लाभ
- कई प्रकार के वायरस, जीवाणुओ और कवक जनित रोगों से वचाव

बी.टी. पत्तागोभी

भारत में जेनेटिक फसलें :

- भारत में वैज्ञानिको की कमेटी जेनेटिक इंजीनियरिंग एप्रूवल कमेटी (जीईएसी) जेनेटिक उत्पादों एवं फसलों को मंजूरी देती है।
- अब तक आलू, पत्तागोभी, टमाटर,समेत लगभग 30 जैनेटिक फसलों के ट्रायल की अनुमति मिल गयी है।
- भारत में अभी भी वृहत स्तर पर जेनेटिक फसलों के बोने की अनुमति नही दी जा रही है।

RIVER WATER POLLUTION

Better Management of Ganga is Needed to Avoid Contaminations during Religious Activities

❑ Sanjay Dwivedi, Seema Mishra and Lalit Agarwal

भारतवर्ष में गंगा नदी को मोक्षदायिनी एवमं पापमोचिनी का स्थान प्राप्त है। ऐसा समझा जाता है कि गंगा स्नान मात्र से ही मनुष्य सभी पापों से मुक्त होकर जीवन और मृत्यु के चक्र से निकलकर मोक्ष प्राप्त कर लेता है। गंगा के तट पर बहुत से एतिहासिक नगर जैसे हरिद्वार, गढ़मुक्तेश्वर, प्रयागराज एवं वनारस आदि बसे हुए हैं, जोकि बहुत सी धार्मिक क्रियाकलापों के प्रमुख केन्द्र हैं। प्रतिवर्ष करोड़ो लोग स्नान पर्वों पर गंगा तट पर धार्मिक अनुष्ठान करवाते हैं। सर्वविदित है कि गंगा जल की शुद्धता एवं उसकी जीवाणु प्रतिरोधक क्षमता विभिन्न प्रकार के प्रदूषणों के कारण घटती जा रही है। सामूहिक स्नान, मन्दिरों के अपशिष्ट और धार्मिक पदार्थों का विसर्जन, मूर्ति विसर्जन, मृत शरीरों का विसर्जन, विभिन्न प्रकार के कारखानों के अपशिष्टों का विसर्जन आदि गंगा प्रदूषण के मुख्य कारक हैं इससे न केवल गंगा में विभिन्न प्रकार के रोगजनित जीवाणु बल्कि भारी धातु की मात्रा बढ़ती जा रही है।

River Ganga is considered as the soul purifier and Mokshdayini, means a dip in the Ganga liberates from the cycle of death and rebirth. The Ganga basin houses many historical towns like Rishikesh, Haridwar, Garhmukteswar, Kannauj, Allahabad, Mirzapur, Varanasi and Gangasagar which are important pilgrim centers where several religious activities take place throughout the year on the bank of Ganga. During different festivals billions of people come to these places for holy dips called "Ganga snan". Devotees offer different kinds of materials like sweets, milk, flowers, leaves, lighted earthen lamps to Ganga, and discard remains of old holy books and idols, thereby contaminating the river water. Several communities in India throw dead bodies and the remains of bones, after crimination, in Ganga as a part of last ritual. The impact of different religious activities on Ganga water has been studied extensively and is summarized below.

1. Religious bathing:

Every day millions of peoples take bath throughout the course of Ganga, however, some of the auspicious days are particularly important when large number of people take a dip in the river. Kumbh is the main event for mass ritualistic bathing which takes place at four places; Haridwar (HarKi Pauri), Allahabad (Prayag), Nashik (Godavari Ghat) and Ujjain (Shipra Ghat). According to Hindu mythology, during the battle of devtas and demons for Amrit (elixir of immortality which was recovered during the churning of the ocean, the Samudra Manthan), was spilled over at these four places. The Kumbh is celebrated once every 12 years in each of the four places for one and half months. During Kumbh billions of people take bath at a specific stretch of river. Several devotees and ascetics reside on the bank of river Ganga during the whole Kumbh period. Some of the auspicious days during Kumbh are particularly heavily crowded which are Makar Sankranti, Paush Purnima, Mauni Amavasya, Vasant Panchami, Magh Purnima and MahaShivratri. During the Kumbh at Haridwar in 2010 the estimated number of bathing population was 41.6 million

Mass Bathing During Maha Khumbha 2013

Address : Plant Ecology and Climate Changes Division, CSIR-National Botanical Research Institute, Rana Pratap Marg, Lucknow-226001, India; e-mail.: drs_dwivedi@yahoo.co.in; seema_mishra2003@yahoo.co.in

(Tyagi et al., 2013). While in the Kumbh at Prayag in 2013 a total no. of 88.7 million people took bath within 45 days (official data from UP Govt. 2013). The biggest gathering was on 10 February 2013 when over 30 million devotees and ascetics took holy dip in the river Ganga in one day on the auspicious event of Mauni Amavasya (Rani et al., 2014). The mass gathering severely deteriorates the water quality because people carelessly use soaps, shampoos, detergents, throw garbage, polythene, discarded clothes as well as throw food, flower, leaves, milk, curd, ghee, coins etc. as offering to river Ganga. Thus, these kind of ritualistic practices have their own good share in contaminating the sacred Ganga water.

The effect of mass ritualistic bathing on the Ganga water quality has been evaluated by Srivastava et al. (2013) during Maha Kumbh 2013, Allahabad by fuzzy environmental model using physico-chemical and bacteriological parameters of water. They found that the water quality of river was deteriorated during mass bathing and it was very poor at most of the sites. Other studies indicated that water quality of the river at Allahabad was worse during Maha Kumbh 2013 than that during Ardha Kumbh 2007 and was not good for bathing or swimming (Yadav, 2007; Srivastava et al., 2013). The presence of fecal coliforms in Ganga water hints at the potential presence of pathogenic microorganisms, which might cause water borne diseases. A significant enhancement of *Salmonella typhi* in the water and sediment of river Ganga was reported during Maha Kumbh 2013 at Allahabad (Rani et al., 2014). The epidemiological study by Tyagi et al. (2013), during Ardh Kumbh at Haridwar in 2010, also showed significant increase in the incidence of water borne infections (gastroenteritis, fever and skin disease) during bathing events. Further, high level of Cd, Cr, Cu, Fe, Mn, Ni, Pb and Zn has also been reported at different bathing sites on the bank of river Ganga, such as in Haridwar (Rai et al., 2012), Allahabad (Gupta et al., 2009) and Varanasi (Pandey et al., 2010). The concentration of many toxic metals was exceeding the permissible limits (WHO, 2008). This might be due to throwing of different material in water during worship of Ganga, such as vermillion, coins etc. containing Pb, Cr, Cu, Fe, Ni, Zn. The increased concentration of toxic metals may pose potential risk to the devotees through direct consumption of Ganga water as religious rites or by use of water for drinking and cooking during the stay of pilgrims at the bank of Ganga on the occasions of ritualistic mass bathing. Besides Kumbh, several other bathing fairs are held on the bank of Ganga throughout the year, such as Somwati Amavasya, Kartik Purnima, Shravan Amavasya, Ganga Dussehra etc. which deteriorates the water quality (Sinha et al., 1991; Sharma and Joshi, 2014). The mass bathing also decreased the transmittance of water (Kulshrestha and Sharma, 2006).

Women carelessly washing clothes During Maha Khumbh -2013

2. Pollution due to idol immersion:

The idol immersion is a religious activity which is also responsible for adding several pollutants in the rivers including Ganga. In India, a lot of religious activities take place round the year. Durga Puja is one of most important festival celebrated in West Bengal, Bihar and Uttar Pradesh. In last 15 years Lakshmi Puja and Ganesh Chaturthi are also celebrated at an equal pace in Uttar Pradesh and Bihar which were originally belonging to other parts of India. In these festivals a huge numbers of Durga, Lakshmi and Ganesha's idols of different sizes (up to 40 feets) are formed every year and immersed in Ganga at the end of event. The idols are constructed by plaster of paris, clay, cloths, small iron rods, bamboo and decorated with different paints such as varnish, water colors etc., plastic and polystyrene which can lead to significant alteration in the water quality after immersion. Paints which are used to colour these idols contains various heavy metals such as mercury, cadmium, arsenic, chromium and lead which are known carcinogens (WHO, 2008). Plaster of paris, used in making of idols, contains gypsum, sulphur, phosphorus and magnesium. Therefore, immersion of these idols poisons the water by increasing acidity and the content of heavy

metals (Das et al., 2012; Kaur et al., 2013; Bhattacharya et al., 2014; Mohini et al., 2014). An estimated 5,000 litres of paint and hundreds of kilograms of plaster of paris and toxic synthetic materials were immersed in the river with the idols. The plastic and polystyrene is non-biodegradable thus toxic and may lead to eutrophication at the river banks because of hampered flow (personal observation). Though, several studies, as mentioned above, show that idol immersion practices severely degrade the water quality of rivers, there is a dearth of data regarding this aspect in Ganga water. Sarkar (2013) reported significant increase in temperature, pH, conductivity, BOD, COD, total alkalinity, chloride, total hardness and phosphate of river Ganga in West Bengal due to idol immersion during Durga Pooja. Chaturvedi and Pandey (2006) assessed the concentration of some trace metals, like Zn, Fe, Ni, Cu, Cr and Cd in Ganga water at Vindhyachal Ghat during Navratri Pooja and they found increase in their levels. During the idol immersion a lot of vermilion (Sindur) is thrown in the river which increases the level of Pb and Cr (Das et al., 2012). The various materials used in decoration of idols not only deteriorates the water quality upon its immersion but it also kills fishes, damages plants and blocks the natural flow of the water, causing stagnation.

3. Disposal of temple waste and religious materials:

More than 1000 tons of flower and garlands are thrown in the river as offering during worship of Ganga as well as those used in the temples nearby. At various places such as Haridwar, Varanasi etc. splendid evening prayer of Ganga is being held during that the devotees offers flowers and hundreds of floating lighted earthen lamps. These processes are more during mass rituals. According to an estimate of Kashi Vishwanath temple administration of Vanarasi, in normal days, over 20 quintal of floral waste was being disposed into the Ganga daily, while during special occasions like Mondays of the month of Shrawan (July-August), the quantity increased by four to five times. Further each household dispose of their religious material, including those used in daily prayer, into the Ganga. Thus, floral and other religious temple wastes continue polluting Ganga water.

4. Dead body cremation:

In the India it is believed that dying and cremated along the banks of the Ganga, particularly in Varanasi, releases soul from cycle of rebirth and the soul shall directly go to the heaven. Due to this religious belief, thousands of dead bodies are being cremated every day on the bank of Ganga. In a study conducted between the year 2009-2011, an average 32000 dead bodies are cremated every year on only two cremation grounds, Harishchandra and Manikarnika Ghat, in Varanasi (Tripathi and Tripathi, 2014). After cremation the ashes as well as tons of half burnt flesh are thrown into the Ganga. Even the ashes of many of those who were cremated elsewhere are thrown in Ganga by the relatives due to religious belief. Further, thousands of un-cremated bodies, such as that of women, children, holy men, snake poisoned and some skin diseased, as well as thousands of animal carcasses, mainly cattle are directly thrown into the river. Such practices not only degrade the water quality but also destroy the picturesqure view of the river.

Reference:

Arora, N.K., Tewari, S., Singh, S., 2013. Analysis of water quality parameters of river Ganga during Maha Kumbha, Hardwar, India. J. Envrion. Biol. 34, 799–803.

Dwivedi, S., Mishra, S., & Tripathi, R. D. 2018. Ganga water pollution: A potential health threat to inhabitants of Ganga basin. Environment International, 117, 327–338.

Joshi, N., Sati, V., 2011. Assessment of water quality of river Ganges at Hardwar during Kumbh Mela–2010. Report Opinion 3, 30–36.

Kulshrestha, H., Sharma, S., 2006. Impact of mass bathing during Ardhkumbh on water quality status of river Ganga. J. Environ. Biol. 27(2 Suppl), 437–440.

Rai, U.N., Prasad, D., Verma, S., Upadhyay, A.K., Singh, N.K., 2012. Biomonitoring of metals in Ganga water at different ghats of Haridwar: Implications of constructed wetland for sewage detoxification. Bull. Environ. Contam. Toxicol. 89, 805–810.

Rani, N., Vajpayee, P., Bhatti, S., Singh, S., Shanker, R., Gupta, K.C., 2014. Quantification of *Salmonella typhi* in water and sediments by molecular–beacon based qPCR. Ecotoxicol. Environ. Safety 108, 58–64.

Sinha, A.K., Pande, D.P., Srivastava, R.K., Srivastava, P., Srivastava, K.N., Kumar, A., et al., 1991. Impact of mass bathing on the water quality of the Ganga river at Haudeshwarnath (Pratapgarh), India: A case study. Sci. Total Environ. 101, 275–280.

Srivastava, P., Burande, A., Sharma, N., 2013. Fuzzy environmental model for evaluating water quality of Sangam zone during Maha Kumbh 2013. Appl. Comput. Intel. Soft Comput. 2013, 1–7.

Tyagi, V.K., Bhatia, A., Gaur, R.Z., Khan, A.A., Ali, M., Khursheed, A., et al., 2013. Impairment in water quality of Ganges river and consequential health risks on account of mass ritualistic bathing. : Desalin. Water. Treat. 51, 2121–2129.

WHO, 2008. Guidelines for

drinking-water quality, 3rd edition incorporating 1st and 2nd agenda. Vol. 1. Recommendations. Geneva, World Health Organization, pp. 306–308b(http://www.who.int/water_sanitation_health/dwq/GDW12rev1and2. pdf).

Yadav, S., 2007. Water quality assessment of water Ganga and Yamuna during Ardh Kumbh - by Fuzzy Analysis [M.S. thesis], Environment Science, Allahabad University, Allahabad, India.

Sharma, V., Joshi, B.D., 2014. A swot analysis of pilgrimage tourism in Haridwar city with special reference to Kanwar Mela. New York Sci. J. 7, 1–3.

Das, K.K., Panigrahi, T., Panda, R.B., 2012. Idol immersion activities cause heavy metal contamination in river Budhabalanga, Balasore, Odisha, India. Intl. J. Modern Engineer. Res. 2, 4540–4542.

Kaur, B.J., George, M.P., Mishra, S., 2013. Water quality assessment of river Yamuna in Delhi stretch during Idol immersion. Intl. J. Environ. Sci. 3, 2122–2130.

Bhattacharya, S., Bera, A., Dutta, A., Ghosh, U.C., 2014. Effects of idol immersion on the water quality parameters of Indian water bodies: Environmental health perspectives. Intl. Lett. Chem. Physic. Astronom. 20, 234–263.

Mohini, G., Ekhalak, A., Ranjana, S., 2014. Pollution load assessment of Tapi river during Ganesh festival, India. Octa. J. Envron. Res. 2, 310–313.

Chaturvedi, J., Pandey, N.K., 2006. Physico–chemical analysis of river Ganga at Vindhyachal Ghat. Curr. World Environ. 1, 177–179.

Tripathi, B.D., Tripathi, S., 2014. Issues and challenges of river Ganga. In: Sanghi, R. (Ed). Our National River Ganga: Life of Millions. Springer International Publishing, Switzerland, pp. 211-221.

कविता

❑ अज्ञात

ऐ सुख तू कहाँ मिलता है ।
क्या तेरा कोई पक्का पता है ।।

क्यों बन बैठा है अन्जाना ।
आखिर क्या है तेरा ठिकाना ।।

कहाँ कहाँ ढूंढा तुझको ।
पर तू न कहीं मिला मुझको ।।

ढूंढा ऊँचे मकानों में ।
बड़ी बड़ी दुकानों में ।।

स्वादिष्ट पकवानों में ।
चोटी के धनवानों में ।।

वो भी तुझको ही ढूंढ रहे थे ।
बल्कि मुझको ही पूछ रहे थे ।।

क्या आपको कुछ पता है ।
ये सुख आखिर कहाँ रहता है ।।

मेरे पास तो दुःख का पता था ।
जो सुबह शाम अक्सर मिलता था ।।

परेशान होके शिकायत लिखवाई ।
पर ये कोशिश भी काम न आई ।।

उम्र अब ढलान पे है ।
हौसला अब थकान पे है ।।

हाँ उसकी तस्वीर है मेरे पास ।
अब भी बची हुई है आस ।।

मैं भी हार नही मानूंगा ।
सुख के रहस्य को जानूंगा ।।

बचपन में मिला करता था ।
मेरे साथ रहा करता था ।।

पर जबसे मैं बड़ा हो गया ।
मेरा सुख मुझसे जुदा हो गया ।।

मैं फिर भी नही हुआ हताश ।
जारी रखी उसकी तलाश ।।

एक दिन जब आवाज ये आई ।
क्या मुझको ढूंढ रहा है भाई ।।

मैं तेरे अन्दर छुपा हुआ हूँ ।
तेरे ही घर में बसा हुआ हूँ ।।

मेरा नहीं है कुछ भी मोल ।
सिक्कों में मुझको न तोल ।।

मैं बच्चों की मुस्कानों में हूँ ।

पत्नी के साथ चाय पीने में ।
परिवार के संग जीने में ।।

माँ बाप के आशीर्वाद में ।
रसोई घर के पकवानों में ।।

बच्चों की सफलता में हूँ ।
माँ की निश्छल ममता में हूँ ।।

हर पल तेरे संग रहता हूँ ।
और अक्सर तुझसे कहता हूँ ।।

मैं तो हूँ बस एक अहसास ।
बंद कर दे तू मेरी तलाश ।।

जो मिला उसी में कर संतोष ।
आज को जी ले कल की न सोच ।।

कल के लिए आज को न खोना ।

मेरे लिए कभी दुखी न होना ।
मेरे लिए कभी दुखी न होना ।।

कृषि तकनीकी

ओयेस्टर मशरूम की उत्पादन तकनीक

❑ गोपाल सिंह, अमरपाल सोम
एवम् आर एस सेगंर

Oyster mushroom is an edible and famous mushroom which mainly includes Pleurotus species. It can be grown easily everywhere at particular temperature and condition. Oyster mushroom mostly includes P. sajor-caju, P. flabellatus, P. florida, P. sapidus, P. eryngii oyster can be grown whole year and can be stored for long time after drying and give high productivity. Production of mushroom can be a good source of income and can be adopt as an employment.

ओयेस्टर मशरूम जिसमें प्रमुख रूप से प्लरोटस प्रजातियाँ आती है। यह अति लोकप्रिय एवं आसानी से उगाया जाने वाला मशरूम है। इसकी प्रजातियां में प्लूरोटस आस्ट्रीटस, प्लूरोटस सजारकाजे और प्लूरोटस सेपिडस प्रमुख है। उत्तरी भारत में प्लूरोटस की अलग अलग प्रजातियों को 10–30 डिग्री तापमान पर वर्ष भर के सभी महीनों में उत्तर भारत में उगाया जा सकता है। हमारे देश मे। इसका उत्पादन बढ़ रहा है। जो वर्तमान में छः हजार टन से अधिक है।

ओयेस्टर मशरूम प्रजातियां

ओयेस्टर मशरूम की विभिन्न प्रजातियों में अलग–अलग रंग होते है। जो सफेद भूरा पीला, गुलाबी तथा कत्थई होते है। वातावरण के प्रभाव से रंगों में परिवर्तन भी होता है। यह आकार में सिपीनुमा या एक बडे चम्मच की तरह होता है। इसका डंठल छोटा या बड़ा हो सकता है।

ओयेस्टर मशरूम की विभिन्न प्रमुख प्रजातियों का विवरण निम्न प्रकार है :

- 1. **प्लूरोटस सजार काजू**: इसका फलनकाय गर्मी में सफेद तथा सर्दियों में पीली स्लेटी रंग का सुगंधित होता है। इस मशरूम के लिये उपयुक्त तापक्रम 25–30°C है।
- 2. **प्लूरोटस फ्लैवलेटस**: इसका फलनकाय झुण्ड में पाया जाता है, तथा सफेद रंग का होता है। पकने पर कुछ मोटा तथा उपयुक्त तापक्रम 20–30°C है।
- 3. **प्लूरोटस फ्लेरिडा** : इसका फलनकाय सफेद से हल्के भूरे रंग का होता है। उपयुक्त तापक्रम 25°C होता है। इसका रंग तापक्रम से प्रभावित होता है।
- 4. **प्लूरोटस सैपीडस**: इसका फलनकाय का बैंगनी भूरे रंग का होता है उपयुक्त तापमान 25–30°C होता है।
- 5. **प्लूरोटस इरिन्जी**: इसका फलनकाय लाल भूरा तथा स्लेटी होता है। फलन काय व्यास 4 सेमी तथा भार 300 ग्राम होता है। उपयुक्त तापक्रम 15–20°C है।

ओयेस्टर मशरूम उत्पादन से लाभः

- 1. ओयेस्टर मशरूम को उत्तर भारत में पूरे वर्ष उत्पादित कर सकते है।
- 2. इस मशरूम को सुखाकर लम्बे समय तक प्रयोग/भंडारण कर सकते है।
- 3. उत्पादन के लिए कम्पोस्ट तथा आवरण मृदा बनाने की आवश्यकता नही है।
- 4. उपज क्षमता अधिक (सूखे भूसे के बराबर भार) होती है।
- 5. इसके उत्पादन के बाद अवशेष

पताः पादप रोग विज्ञान विभाग, कृषि जैव प्रौद्योगिक, स0व0भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय मेरठ 250110
E-mail: sengar065@gmail.com

ओयेस्टर मशरूम उगाने की विधि

भूसे का प्रयोग खाद के रूप में कर सकते है।

ओयेस्टर मशरूम उगाने की विधिः

1. धान की पुआल के छोटे टुकड़े (4–5 सेमी) या गेहूँ के भूसे को रात भर (16 घंटे) पानी की टंकी में 100 लीटर पानी के 7 ग्राम वेवीस्टीन तथा 100 मिली फार्मलीन के घोल में डुबायें।
2. बेहतर परिणाम प्राप्त करने के लिए गर्म जल एवं वाष्पीकरण द्वारा गीले भूसे को पाश्चुरीकृत कीजिए।
3. रात भर भीगने के बाद पुआल को घोल से निकालकर पानी निथारने के लिए किसी पक्के फर्श पर 4–5 घण्टे के लिए रख दें।
4. गीली उपज सामग्री 2 प्रतिशत की दर से बीज मिलाइये। स्पान मिले हुए पुआल को 10 किग्रा0 के पॉलीथीन के थैलों में भरकर, थैलों का मुंह बंद कर दें। थैलों के चारो तरफ 1 सेमी व्यास के 8–10 छिद्र बना दें।
5. बिजाई किये गये थैलों को दूसरे से 15–20 सेमी की दूरी पर रैक पर फसल कक्ष के भीतर रखें। फसल कक्ष का तापमान 20–30°C एवं आर्द्रता 70–85 प्रतिशत रखें दो सप्ताह बाद जब कवक जाल पूरी तरह पनप जायें तो थैलियों के आवरण को काटकर अलग कर दे।

ओयेस्टर मशरूम उगाने की विधि

6. कमरे में हवा के आवागमन की व्यवस्था कीजिए। एक से दो घंटे सूर्य का बिखरा प्रकाश अन्दर आने दीजिए। उचित तापमान (15–20°C) का स्तर बनाये रखे।
7. सामान्यताः दिन में दो बार फसल कक्ष में पानी का छिडकाव करें। जिससे 80 प्रतिशत तक आर्द्रता कमरे में बनी रहे। गर्मी में अधिक छिडकाव की आवश्यकता होती है।
8. तीन चार दिन में पिन हेड दिखायी देगी जो पाँच–छः दिनों में तैयार हो जायेगी। तैयार खुम्ब को जड़ सहित उखाड़ लीजिए और उपज स्थल में कोई डंठल न छोड़िए।
9. पहली तुड़ाई हेतु फसल 20–30 दिनों में तैयार हो जाती है। पहली तुड़ाई के बाद 1 सेमी उपज सामग्री की ऊपरी परत हटा दीजिए तथा तीन दिन के लिए पानी डालना रोक दीजिए।
10. सात से दस दिनों के बाद दूसरी फसल तैयार हो जायेगी। इस प्रकार कुल तीन फसल प्राप्त की जा सकती है।

उपजः सावधानी से कार्य करने पर उपयोग में लाये गये सूखे भूसे का लगभग 60–70 प्रतिशत वजन के बराबर फसल प्राप्त हो सकता है। इसका तात्पर्य है कि 100 किग्रा. सूखे भूसे से 60 से 70 किग्रा. तक मशरूम उत्पादन किया जा सकता है।

ढीगरी मशरूम उत्पादन (संक्षिप्त)

1. रसायनिक उपचार के लिए 16 घंटे तक भूसा भिगोयें।
2. भूसा को उचित नमी (60 प्रतिशत) पर होने के बाद मशरूम बीज (स्पान) मिलाना तथा पॉलीथीन बैगों में भरना।
3. मशरूम बीज युक्त बैंगों को कमरे में कवक जाल फैलाव हेतु रखना।
4. कवक जाल युक्त बैंगों से पॉलीथीन हटाना तथा 48 घंटे तक बिना पानी

के छिड़काव के रखना।

5. कलिकाओं का बनना तथा पानी का पर्याप्त छिड़काव करना (80–90 प्रतिशत बनाने हेतु)

फसल सुरक्षा

1. संक्रमण मुक्त भूसे तथा बीज का प्रयोग करना चाहिए।
2. बीजाई का स्थान रोग, कीट एवं सूत्रकृमि से मुक्त होना चाहिए।
3. प्रत्येक फसल लगाने से पहले फसल कक्ष को पूर्णतयाः विसंक्रमित कर लेना चाहिए। इसके लिए फार्मलीन का प्रयोग करना चाहिए।
4. अगर ढींगरी का डंठल बड़ा तथा कैप छोटा है तो कमरे में ऑक्सीजन की कमी हो सकती है अतः खिडकी को अधिक समय तक खोलना चाहिए।

ओयेस्टर मशरूम उत्पादन का आर्थिक विश्लेषणः

उत्तर भारत में ओयेस्टर मशरूम की कम से कम तीन फसल प्रति वर्ष ली जा सकती है।

ओयेस्टर मशरूम उगाने के लिए विभिन्न स्थानों पर मशरूम उत्पादन में प्रयोग होने वाली सामग्री की उपलब्धता, कीमत, श्रम व्यय और मशरूम विक्रय कीमत अलग–अलग होती है। इसलिए इसके उत्पादन से शुद्ध लाभ समान नही होता है।

क्र.सं.	सामग्री	मात्रा	अनुमानित मूल्य (रू0)
1.	मशरूम उत्पादन कक्ष (30'20'12')	03	60,000/–
2.	रैक (लोहा)	12	12,000/–
3.	स्प्रेयर, थर्मामीटर, तराजू	–	5000/–
4.	ड्रम/टब (पानी हेतु)	3	3000/–
			80,000/–
ब. अस्थायी पूंजी (आवर्ती व्यय)			
1.	भूसा	30कु.	15,000/–
2.	पॉलीथीन बैग	01 हजार	2,000/–
3.	स्पान (मशरूम बीज) बैग	01 कु.	8,000/–
4.	रसायन/कीटनाशक	–	2,000/–
5. अन्य खर्च			2,000/–
			29,000/–
स. अवमूल्यन एवं ब्याज			
1.	अवमूल्यन (5 प्रतिशत)		4,000/–
2. ब्याज (10 प्रतिशत)			8,000/–
द. कुल खर्च (ब+स)			
य. उत्पादन (कु.)		18 कु. –	
1. प्रति कु. लागत		–	2278/–
2. आय (रू0) छः हजार रू0		–	1,08,000/–
3. शुद्ध आय			**1,08,000-4100=67,000/**

एक निवेदन

- आओ मिलकर अलख जगाए। सब मिलकर मतदान करायें।।
- लालच देकर वोट जो मांगे। भ्रष्टाचार करेगा आगे।।
- लोकतंत्र हो तभी महान। सब करें जहाँ मतदान।।
- सत्य और ईमान से। सरकार बनें मतदान से।।
- वोट हमारा अधिकार। कभी न करें इसे बेकार।।
- घर–घर में संदेश दो। वोट दो वोट दो।।

सोसायटी फार इन्वायरमेन्ट एण्ड पब्लिक हेल्थ (सेफ), लखनऊ

चलो चलें मतदान केन्द्र की ओर.....

Agriculture Technology

Prospects and opportunity of milky mushroom in India

❑ Gopal Singh, Mohit, Sonu Katiyar and R. S. Sengar

भारत में मशरूम की खेती दिन प्रति दिन बढ़ जा रही है क्योंकि एक आम आदमी भी मशरूम की भोजन में उपयोगिता समझने लगा हैं। भारत में लगभग 0.13 मिलियन टन प्रतिवर्ष मशरूम की उपज होती है, जिससे लगभग 7282 लाख रूपये का प्रतिवर्ष व्यवसाय होता है। दूधिया मशरूम पौश्टिक गुणों से भरपूर होती है। इसमें लगभग 17 प्रतिशत प्रोटीन, 4 प्रतिशत फैट, 3 प्रतिशत रेसे एवम् 64 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट पाया जाता है। इस प्रजाति के मशरूम अति अम्लता के रोगियों के उपयोगी मानी जाती है। विगत कुछ वर्षो से भारत में भी दूधिया मशरूम का उत्पादन बढ़ता जा रहा है। कई प्रोग्रेसिब किसान इसका उत्पादन करके अपनी वार्षिक आय में वृद्धि कर रहे हैं। 2017 के आंकड़ो के अनुसार भारत में दूधिया मशरूम का लगभग 7282.26 लाख रूपये का उद्योग हुआ। इस लेख में दुधिया मशरूम को उगाने के तरीके, रख रखाव एवं आने वाले व्यय का विस्तृत वर्णन किया गया है।

Milky mushroom

Milky mushroom (*Calocybe indica*) one of the most important edible mushroom commonly known as Kuduk or Dudh Chatta. It is more attractive with excellent shelf-life grows on several agricultural wastes and on wide range of temperatures. It has good biological efficiency under optimum condition. It has excellent keeping quality and does not turn brown. Mushroom, also called as 'white vegetables' or 'boneless vegetarian meat' and once called the "Food of the Gods".

Milky mushroom has moderate protein content. Dried sporocarp of this mushroom contains 17.69% protein, 4.1% fat, 3.4% crude fibre and 64.26% carbohydrate. In addition to this it has most of mineral salt required for human body such as potassium, sodium, calcium and iron. It is highly suitable for the people suffering with hyperacidity and constipation.

Mushroom status in India

At present, the total mushroom production in India is approximately 0.13 million tons. From 2010-2017, the mushroom industry in India has registered an average growth rate of 4.3% per annum. Out of the total mushroom production, white button mushroom share is 73% followed by oyster mushroom (16%), paddy straw mushroom (7%) and milky mushroom (3%). Compared to other vegetables; per capita consumption of mushrooms in India is meagre and data indicates it is less than 100 grams per year. In the year 2016-2017, Indian mushroom industry generated revenue of Rs. 7282.26 lakhs by exporting 1054 quintals of white button mushroom in canned and frozen form. By considering the production statistics, the spawn demand in India is estimated about 8000-10000 tons per annum. Majority of the commercial spawn to the growers is being supplied by the private units and the contribution of public sector

Address : Department of Plant Pathology and Department of Agri-biotechnology, Sardar Vallabhbhai Patel University of Agriculture And Technology, Meerut (UP) 250110 E-mail: sengar065@gmail.com

organizations in spawn supply was limited to 10% only. (Sharma et al., 2017).

Preparation of substrate:

In the cultivation of milky Mushroom, most cellulosic farm waste is used as substrate. These include paddy straw, wheat straw, corncobs, bagasse, banana leaves, leaf litters of various kinds, waste paper, cotton waste etc., Among them, paddy straw and wheat straw is found to be the best substrate giving more bio efficiency. Paddy straw is chopped into bits of size2-3" for easy handling and operation.

Sterilization of substrate:

There are three methods with which the chopped straw can be sterilized. Any one method can be adopted based on the facilities available.

1. Hot water treatment/ boiling method

i- Soak the chopped paddy straw in cold water for 4 h. in a G.I. Drum.

ii- Drain the water and add fresh water and cover the drum with gunny bag.

iii- Boil the contents over the flame for one hour.

iv- After boiling, take out the straw and drain the excess water by keeping in wire baskets.

v- Spread the straw as thin layer on hessian cloth, spread on a raised platform.

vi- Shade dries the straw to get 60-65 % moisture capacity.

2. Steaming method :

i- Soak the chopped paddy straw in cold water for 4 hrs in a G.I. Drum.

ii- Drain the water and take straw out and fill it in big wire baskets.

iii- Keep the wire baskets in an autoclave and put on the autoclave and allow it to steam for 1 hr.

iv- After steaming, take out the straw and drain the excess water by keeping in wire baskets.

v- Spread the straw as thin layer on a hessian cloth, spread on a raised platform. Shade dry the straw to get 60-65 % moisture capacity.

3. Chemical method:

i- Take 100 liters of clean cold water in a 200 litre G.I. drum and mix 10 g of carbendazim and 120 ml. of formalin.

ii- Weight 10 kg of dry straw and soak in the solution and cover it air tight with a thick polythene sheet.

iii- Soak the straw in the chemical solution for 16 hrs.

iv- After soaking, take out the straw and drain the excess chemical solution by keeping then in wire baskets.

v- Spread the straw as this layer on a hessian cloth, spread on a raised platform.

vi- Shade dries the straw to get 60-65 % moisture capacity.

Precautions:

1. The straw should not be dried on a floor.

2. The hessian cloth should be disinfected or any disinfectant before use.

3. In the case of chemical treatment, the doses of the chemical should not exceed the recommended level.

4. The 60 % moisture content in the straw can be judged by taking a handful of straw and squeeze it tightly. The water should not drip out and the palm can feel the wetness of the straw.

Bed preparation:

The cultivation of milky mushroom is usually carried out in transparent polythene covers.

The size of the cover should be 60 x 30 cm, with a thickness of 80 gauge.

Procedure:

1. Wash hands thoroughly with antiseptic lotion.

2. Take the polythene cover and tie the bottom end with a thread and turn it inwards.

3. Mix the dried straw thoroughly to get a uniform moisture level in all areas.

4. Take out well-grown bed spawn, squeeze thoroughly and divide into two halves. (Two beds are prepared from the single spawn bag).

5. Fill the straw to a height of 3" in the bottom of polythene bag, take a handful of spawn and sprinkle over the straw layer, concentrating more on the edges.

6. Fill the second layer of the straw to a height of 5" and spawn it as above.

7. Repeat this process to get five straw layers with spawns.

8. Gently press the bed and tie it tightly with a thread.

9. Put 6 ventilation holes randomly for ventilation as well as to remove excess moisture present inside the bed.

10. Arrange the beds inside the shed, (Spawn running room) following rack system of hanging system.

11. Maintain the temperature of

30-35° C and relative humidity 80-85 % inside the shed.

12. Observe the beds daily for contamination, if any. The contaminated beds should be removed and destroyed.

13. Similarly, observe regularly for the infestation of insect pests viz., flies, beetles, mites etc. If noticed spray the pesticide like Malathion in side @ 1 ml per liter of water.

14. The fully spawn run beds can be shifted to blue colored tent after casing for initiation of buttons.

Precautions

1. Keep the spawn running room dark so that spawn running will be faster.

2. Periodically place rat-baiting to kill rats as they are attracted by the spawn.

3. Periodically sprinkle water on sand layer to maintain the required conditions.

4. Never spray any insecticides on the mushroom beds.

Casing and Cropping

In the case of milky mushroom, an extra process called casing has to be done to induce button formation.

Casing is nothing but application of thin layer of sterilized soil on the surface of mushroom bed to induce buttons formation. For casing, garden land soil rich in calcium is preferable. Instead of this soil and river sand are mixed in equal proportion can also be used. Sometimes the soil is mixed with calcium carbonate @ 100 gm./kg and used as a casing medium. The soil used for casing process should be free of stones and stubble and has to be sterilized before casing. The soil is taken in a mud pot or a vessel and steamed in an autoclave or pressure for 45 minutes. (soil can also be mixed with a little quantity of water and sterilized for this purpose). The soil is used for casing after cooling.

After casing operation the beds should be arranged inside the blue polythene covered pit tent for the growth of the mushroom. The fungus requires an optimum temperature of 30-35° C and relative humidity of 80-85 per cent for the better growth and production of sporocarp. In addition, the fungus needs a light

ECONOMICS OF MILKY MUSHROOM PRODUCTION

A. Fixed cost

S.N.	Materials	Quantity	Price
1.	Mushroom production house (30'x20'x12')	03	60,000/-
2.	Racks	12	12,000/-
3.	Sprayer, thermometer and weighing balance	-	5,000/-
4.	Dram	3	3,000/-
		Total	**80,000/-**

B. Working expenditure

1	Straw	3 tonnes	15,000/-
2	Polythene bags (80 gauge)	1 thousand	2,000/-
3	Spawn bag	100 kg	8,000/-
4	Casing	300 kg	2,000/-
5	Fungicides, insecticides etc.	-	3,000/-
6	Other cost	-	2,000/-
		Total	32,000/-

C. Depreciation and Interest

1	Depreciation (5%)	4,000/-
2	Interest (10%)	8,000/-

D. Total cost (B+C) 44,000/-

E. Production (kg) **15 quintal**

1.	Cost per quintal	2,934/-
2.	Income (Rs. 7,000 per 100 kg)	1,05,000/-
3.	Net Income	1,05,000 - 44,000 = 61,000/-

intensity of 2500- 3000-lux for production of buttons.

Procedure:

1. Take the fully spawn run bed and cut horizontally into two equal halves.

2. Compact the beds as much as possible by pressing firmly with hand.

3. Apply casing soil to a height of 1 cm and press it gently.

4. Spray the water sufficiently to wet the cased soil.

5. Place the beds inside the blue tent.

6. Observe the beds daily and spray water according to need to keep the beds wet.

7. Watch for any contamination and insect pests. If noticed take necessary steps. (ten days after casing the small pinhead buttons develop and within another seven days mushrooms are ready for harvest).

8. Harvest the mushroom, clean it and pack it in a polythene bag for sales.

9. Stir the top of the bed after first harvest and spray water regularly. (Second harvest can be obtained in another 10 days).

10. Disturb the topsoil after second harvest and spray water as regular. (Third harvest can be done after 10 days and for commercial cultivation a maximum of three harvests is recommended).

11. The mushroom yield of 350-400 g can be obtained from 250 g dry weight of the straw, providing all optimum conditions inside the mushroom shed.

Precautions:

1. Optimum temperature of 30-35° C and relative humidity of 80-85% should be maintained inside the shed.

2. Never pour water on the beds, which leads to complete rotting of young developing buds spray water on the beds only.

3. Always harvest the mushroom in the morning and pack them immediately.

4. If the closed bed system or other partial opening methods is followed, it is better to wet the sand layer frequently to maintain the temperature and relative humidity.

Plate-1: Cultivation Technology of Milky Mushroom

1. Wheat straw soaked in water.
2. Spreading of water soaked wheat straw.
3. Wheat straw packing in polythene bags.
4. Casing on complete spawn run polythene bags.
5. Milky mushroom growing in bags.

कृषि वानिकी

उत्तर प्रदेश के आम के बागों के पोषक तत्वों का मूल्याकंन

❑ तरूण अदक,घनश्याम पान्डें,
विनोद कुमार सिंह एवं कैलाश कुमार

पोषक तत्व पौधों एवम् फलों की वृद्धि के लिए आवश्यक होते है। लेकिन शोध से ज्ञात हुआ है कि उत्तर प्रदेश के आम के बागों की मृदा एवम् आम की पत्तियों में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी पाई गयी, फलस्वरूप आम की उत्पादकता प्रभावित हुई है। उत्तर प्रदेश के आधिकांश आम के बागों की मिट्टी में जिंक और कॉपर की कमी पाई गयी, एवम् लखनऊ के बागों कि कॉपर और मैगनीज क्रमशः 48,14 और 8 प्रतिशत् कम थे। अतः बागों से अधिक आय प्राप्त करने के लिए उनका समेकित पोषक तत्व प्रवन्धन आवश्यक है। जिसके लिए किसानो को सलाह दी जाती है। कि वे अपने बागों की मृदा का परीक्षण कराकर उसमे जिस पोषक तत्व की कमी हो उसका छिड़काव करें।

आम फलों का राजा होते हुए भी उत्तर प्रदेश मे इसकी औसत उपज राष्ट्रीय औसत उपज से कम है जिसका मुख्य कारण मृदा एंव पत्तियों में मुख्य एव सूक्ष्म तत्वों की कमी के अतिरिक्त पेड़ो की अधिक आयु एवं उनका उचित प्रवन्धन न होना है। मृदा के भौतिक रसायनिक गुण मुख्य रूप से मृदा का सख्त होना, जल शोषण क्षमता का कम होना एवं मृदा संरचना के साथ–साथ मृदा गठन बागों में पोषक तत्वों को प्रभावित करता है। बलुई मिट्टी में रोपित बागों में उक्त समस्या अधिक पायी गयी है। मृदा एंव पत्तियों के विश्लेषण से ज्ञात हुआ है कि समान्यतः जैविक कार्बन, जिंक, मैगनीज, कापर, और वोरान की कमी पायी गयी जिसका सीधा सम्बन्ध फल उत्पादकता एवं गुणवत्ता से होने के कारण गुणवत्ता युक्त उपज कम होती है। बागों से अधिक आय प्राप्त करने के लिए उनका समुचित समेकित पोषक तत्व प्रबन्धन आवश्यक है।

संतुलित पोषक तत्वों का उपयोग फल उत्पादन के लिए आवश्यक होता है। राज्य स्तर अथवा क्षेत्र स्तर पर मृदा विश्लेषण के उपरान्त की गयी संस्तुतियो से अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। देश में किसानो की प्रतिव्यक्ति आय विभिन्न क्षेत्रों में अलग–अलग है। पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, महाराष्ट्र और गुजरात के कृषको की प्रति व्यक्ति आय उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिमी बंगाल, उड़ीसा और पूर्वोत्तर से अधिक है। पश्चिमी उत्तर प्रदेश के किसानों की आय अन्य प्रादेशिक क्षेत्र की अपेक्षा अधिक है। बागों से अधिक आय प्राप्त करने के लिए उनका समुचित समेकित पोषक तत्व प्रवन्धन आवश्यक होता है। पेड़ो को सूक्ष्म तत्वों की उपलब्धता एंव उनके प्रवन्धन पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। क्योकि गुणवत्तायुक्त एंव पोषण हेतु सूक्ष्म पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। आम की औसत राष्ट्रीय उत्पादकता विश्व की तुलना में बहुत कम है। जिसको बढाने के लिए उचित शस्य क्रियाओ के साथ सन्तुलित पोषण प्रवन्धन को अपनाना होगा।

देश में आम उत्पादन क्षेत्रों में उत्तर प्रदेश का मुख्य योगदान है। इस क्षेत्र में एकीकृत कृषि प्रणालियो के घटक के रूप में उगायी जाती है। फलों के आकार में कमी, फल गिरना, फल कटना इत्यादि आम के बागों की कम उत्पादकता आम की मुख्य समस्याओं के रूप में देखा जाता है। आम उत्पादकता कम होने के कारणो में प्रमुख रूप से सूक्ष्म पोषक तत्वो का सन्तुलित प्रयोग न करना है। बागों की निरन्तर उत्पादकता बनी रहे इसके लिए पौधो की मॉग के अनुसार पोषक तत्वों को सन्तुलित करना आवश्यक है। भारत के उपोष्ण कटिबन्धीय क्षेत्रो में फल उत्पादन प्रणालियो में उत्पादकता प्रभावित होने में मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ का कम होना प्रमुख है जिससे फूलों से सम्बंधित समस्या हो सकती है। अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए समेकित पोषक तत्व प्रवन्धन करना चाहिए। पोषक तत्व प्रवन्धन का अधिक लाभ मिट्टी की क्षमता, किस्म, दशा और पोषक

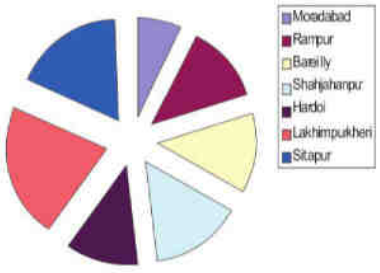

आम के अधिकांश बागो में पत्तियो में पोटेशियम की कमी

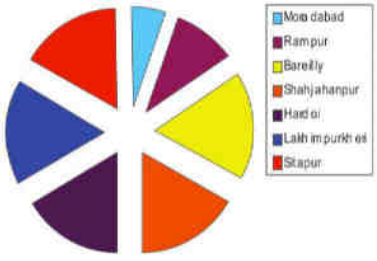

आम के पत्तियो में जिंक की कमी

पता : केन्द्रीय उपोष्ण बागवानी संस्थान, रहमानखेड़ा, लखनऊ–226101, E-mail : tarunadak@gmail.com

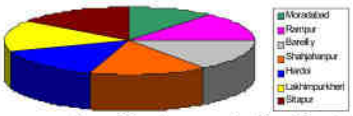

आम के अधिकांश बागो में पत्तियो में कापर की कमी

तत्वों के आपूर्ति करने की क्षमता, तथा उनका प्रकार, दशा और कार्बनिक और आर्कबनिक पदार्थो की मात्रा पर निर्भर करते है। मृदा से जैव रासायनिक प्रक्रियाए रखने के लिए पोषक तत्वों की आपूर्ति उर्वरक की अपेक्षा खादों (कार्बनक पदार्थो) से की जाय जिससे मृदा स्वास्थ्य ठीक बना रहे और उत्पादन निरन्तर मिलता है।

समुचित तकनीकि ज्ञान के अभाव में सूक्ष्म तत्वों का प्रयोग बागवानों द्वारा बहुत सीमित मात्रा में किया जाता है जिससे उपज में गुणवत्ता प्रभावित होती है। सूक्ष्म पोषक तत्वों का सन्तुलित प्रयोग करने के प्रति बागवानो को जागरूक किया जाय। जिससे लागत व्यय कम करने के साथ–साथ अधिक लाभ बागवानों को मिल सके। आम की उत्पादकता वर्ष 2011–12 में 6.8 मैट्रिक टन थी जो बढ कर वर्ष 2016–17 में 8.7 मैट्रिक टन हो गयी। आम का क्षेत्रफल भी वर्ष 2011–12 में 258.3 हजार हेक्टेयर था जो वर्ष 2016–17 मे बढकर 264.93 हजार हैक्टेयर हो गया।

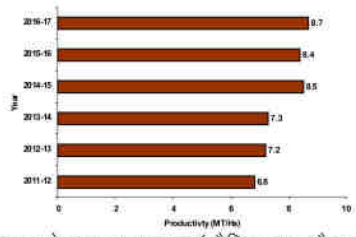

भारत मे आम उत्पादकता(मैट्रिक टन/हैक्टर) ख्हार्टिकल्चर स्टेटिक्स एट ए ग्लास–2017

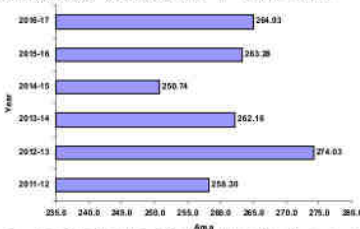

उत्तर प्रदेश में आम का क्षेत्रफल (000 हैक्टर) 2011–17) ख्हार्टिकल्चर स्टेटिक्स एट ए ग्लास–2017.

निसंन्देह मिट्टी में पोषक तत्व प्रबन्धन क्षेत्र और समय के साथ काफी भिन्न होता है असन्तुलित उर्वरक प्रयोग, प्राकृतिक सेंठन और पर्यावरण की स्थिति (तापमान और वर्षा) उनकी उपलब्धता आपसी सम्बन्धों पर निर्भर करती है। समान्यता बगीचे की मिट्टी में सूक्ष्म पोषक तत्वो की उपलब्धता भूमि उपयोग में मृदा प्रवन्धन प्रणाली एक कार्य है। वर्तमान में बागों मे सूक्ष्म पोषक

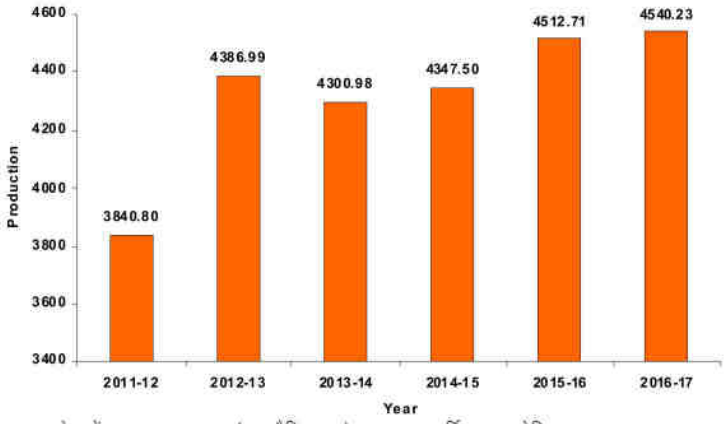

उत्तर प्रदेश में आम का उत्पादन (000 मैट्रिक टन) 2011–17 हार्टिकल्चर स्टेटिक्स एट ए ग्लास–2017.

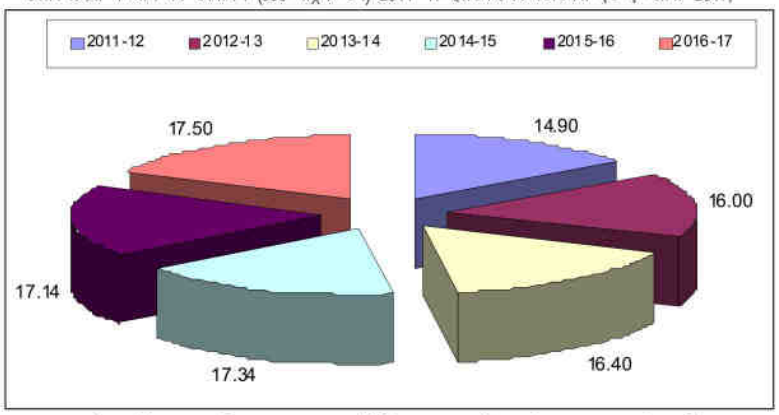

उत्तर प्रदेश में आम की उत्पादकता (मैट्रिक टन/हैक्टर)–2011–17) हार्टिकल्चर स्टेटिक्स एट ए ग्लास–2017

तत्व की उपलब्धता एवं उनके प्रयोग की समुचित जानकारी के साथ–साथ पौधो को तत्व विषय की आवश्यकता को तत्व विशेष की आवश्यकता का समय एवमं उनके प्रयोग करने की विधि का एक योजनावद्ध तरीके से प्रयोग में लाया जाय जिससे सूक्ष्म पोषक तत्व प्रबन्धन की सकारात्मक भूमिका की सीमाओ का आंकलन भी समुचित किया जा सके। उत्तर प्रदेश में आम का उत्पादन 2011–12 में 3840.8 से बढकर 2016–17 में 4540.23 हजार मैट्रिक टन हो गया। आम की उत्पादकता उत्तर प्रदेश में वर्ष 2011.12 14.9 मैट्रिक टन/है0 से बढकर वर्ष 2016–17 में 17.5 मैट्रिक टन/हेक्टेयर होगी।

विभिन्न जनपदो मे कमी का मूल्यांकन– आम के बागो की मिट्टी एवं पत्तियो के विश्लेषण हेतु उत्तर प्रदेश के लखीमपुर खीरी, सीतापुर, मुराबाद, रामपुर, बरेली, शाहजॉपुर और हरदोई जनपदो से नमुनों को एकत्र किया गया। मृदा विश्लेषण से ज्ञात हुआ कि अधिकांश बागो की मिट्टी में कार्बनिक कार्बन की मात्रा 0.5 प्रतिशत से कम थी जबकि 25. 4 प्रतिशत मिट्टी में कार्बनिक कार्बन

औसत मात्रा में पाया गया। सूक्ष्म तत्वो में मैगनीज, कापर और जिंक की कमी क्रमशः 92.0, 45.9 और 23.2 प्रतिशत पायी गयी। मृदा में आयरन की मात्रा अधिकांश बागो में पर्याप्त पायी गयी। शाहजहांपुर और उसके आस पास के क्षेत्रों मे 77 प्रतिशत बागो में जिंक की कमी पायी गयी जबकि बरेली, शाहजहॉपुर और हरदोई जनपदो के सभी बागों में कापर की कमी मिट्टी में पायी गयी। सीतापुर क्षेत्रों में बागों में कापर की कमी नही पायी गयी। पत्तियो के विष्लेषण मे पोटेशियम की कमी अंकित की गयी। जबकि नाइट्रोजन और फास्फोरस पर्याप्त मात्रा में थे। कम कार्बनिक पदार्थ, मिट्टी संरचना एव

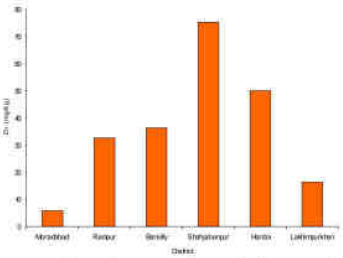

उत्तर प्रदेश के आम के बागो में मृदा में जिंक की कमी (प्रतिशत)

गंठन और उपोष्ण कटिबन्धीय पर्यावरण के कारण सूक्ष्मजीवों की गतिविधि जैसे कारक इसके लिए जिम्मेदार हो सकते है।

विभिन्न जनपदो के आम के बागों की पत्तियो का मूल्यांकन

आम की पत्तियों के नमूनो के विष्लेशण

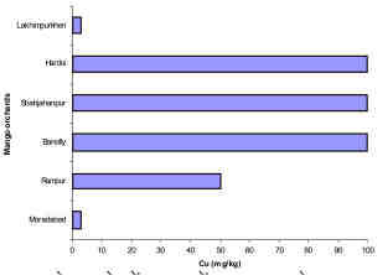

आम के बागो में मृदा में सूक्ष्म तत्वो कापर की कमी (प्रतिशत)

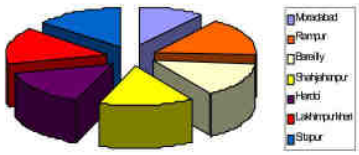

आम के बागो में मृदा में सूक्ष्म तत्वो मैगनीज की कमी

से ज्ञात हुआ कि नाइट्रोजन और फासफोरस की मात्रा पर्याप्त और व्यापक रूप से पोटेशियम की कमी अंकित की गयी। जनपद मुरादाबाद में पोटैशियम की 33.3 प्रतिशत कमी और लखीमपुर खीरी में 100 प्रतिशत पत्तियो में कमी पायी गयी। यहॉ के बागो में पोटैशियम के प्रयोग की तत्काल आवश्यकता का संकेत है। क्योंकि पोटेशियम मुख्य रूप से फल गुणवत्ता हेतु आवश्यक होता है। सूक्ष्म पोषक तत्वों के सम्बन्ध में बरेली, शाहजहॉपुर, हरदोई, लखीमपुर खीरी, और सीतापुर जनपदो में अधिकांश में जिक, और कॉपर की कमी दिखाई दी। उपरोक्त जनपदो मे पोषक तत्वों की कमी के कारण फल उपज 7.6 टन/हैक्टयर अंकित की गयी।

मलिहाबाद क्षेत्र के 22 आम के बागों की मिट्टी परीक्षण करने से ज्ञात हुआ कि 64. 8 प्रतिशत मृदा नमूनो में कार्बनिक पदार्थ पोषक तत्व (एन) की कमी पायी गयी जबकि 35.2 प्रतिशत मृदा नमूनो का औसत माध्यम वर्ग में पाया गया। मृदा नमूनो मे सूक्ष्म तत्वों की मात्राए क्रमशः 68, 21, 52 और 52 प्रतिशत मृदा

मृदा का कार्बनिक कार्बन ¼%)			जिंक (पी पी एम)			कापर (पी पी एम)		
श्रेणियो	नमूना की संख्या	% नमूना	श्रेणियो	नमूना की संख्या	% नमूना	श्रेणियो	नमूना की संख्या	% नमूना
%	57	64.8	0.5–1.0	68	77.3	0.4–0.90	21	23.9
–0.75 %	31	35.2	> 1.01	20	22.7	0.91–1.40	32	36.4
6%	–	–	–			>1.41	35	39.8
			मैगनीज (पी पी एम)				आयरन (पी पी एम)	
			श्रेणियो	नमूना की संख्या	% नमूना	श्रेणियो	नमूना की सख्या	% नमूना
			4.0–7.0	52	59.1	2.0–4.0	52	59.1
			7.1–10 0	22	25.0	4.1–6.0	22	25.0
			> 10.0	14	15.9	> 6.0	14	15.9

नमूने जिंक, कापर, मैगनीज और आयरन माध्य पाये गयें। जैविक कार्बन की मात्रा अठारह बगीचों में कम पायी गयी। जिसके लिए पोषक के कार्बनिक स्त्रोत से प्रयोग करने की आवश्यकता है। एकल फसल लिए जाने के कारण मृदा की ऊपरी सतह सख्त हो जाती है जिससे मृदा मे वायु संचार कम हो जाने के साथ मृदा में जैविक क्रियाएं भी प्रभावित होती हैं। जिसके कारण पौधों को पोषक तत्वो की मात्राए कम मिल पाती है जिसका सीधा प्रभाव पौधो की बढवार एंव उपज पर पड़ता है।

उत्तर प्रदेश के अधिकांश आम के क्षेत्रो में जिंक और कापर की कमी पायी गयी जो आम फल उत्पादन में प्रमुख बाधाओं में से एक है। इनके प्रवन्धन कार्यक्रम हेतु प्राथमिकता के आधार लिया जाना चाहिए जिससे आम की उत्पादकता निरन्तर बनी रहे। लखनऊ के आसपास के आम के क्षेत्रो में अध्ययन से पता चला है कि जिंक, कापर और मैगनीज क्रमशः 48, 14 और 8 प्रतिशत मृदा मे कम है। जबकि 100 प्रतिशत वोरॉन की मृदा और पत्तियो में कमी अंकित की गयी। इस क्षेत्रों मे नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटेशियम की मात्रा पर्याप्त पायी गयी इनकी कमी मात्र कुछ बागो में पायी गयी। पत्तियो की विश्लेषण में 40 प्रतिशत जिंक के कमी और 100 प्रतिशत बोरान की कमी पायी गयी। इस क्षेत्र के बागो को स्वस्थ बनाये रखने हेतु तत्काल प्रभाव से उन्नति उत्पादन तकनीकी को अपनाया जाय जिससे बागो की उत्पादकता का स्तर निरंन्तर बने रहने के साथ–साथ मिट्टी और पत्तियों के विश्लेषण के आधार पर उचित पोषण प्रवन्धन प्रणाली को अपनाया जा सके। प्रदेश के बागो में जिंक और वोरान की कमी की पूर्ति हेतु किसानों को सलाह दी जाती है कि 200 ग्राम जिंक सल्फेट प्रति पेड़ मृदा में अक्टूबर माह तक देना चाहिए तथा 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट के दो छिड़काव फल, मटर के दाने के बराबर होने पर और दूसरा छिड़काव उसके 20–25 दिनों के बाद कर देना चाहिए। बोरान की कमी को दूर करने के लिए अक्टूबर माह में 100 ग्राम वोरेक्स–प्रति पेड़ मृदा में देना चाहिए। गुणवत्तायुक्त फल उत्पादन हेतु किसानों को सलाह दी जाती है कि 0.5: बोरेक्स/0.2: सोलूबोर/0.2: फॉलीबोर का फल बैठने के उपरान्त और मटर के दानो के बराबर होने पर छिड़काव करना चाहिए।

ग ज ल

❐ सचिन मेहरोत्रा

इस ज़ीस्त की असास थी जाने कहाँ गयी
आँखो में जो ये प्यास थी जाने कहाँ गयी

मिलता नहीं है ख़ुद का भी साया कहीं पे अब
इक रौशनी जो पास थी जाने कहाँ गयी

वो दिन बहुत हसीं था कि पहलू-नशीं थे ग़म
वो शाम कितनी ख़ास थी जाने कहाँ गयी

सब कुछ तो लुट चुका है फ़क़त जिस्म है बचा
जीने की जो ये आस थी जाने कहाँ गयी

एहसास दर्द का भी अब होने लगा है कम
इस रूह की जो यास थी जाने कहाँ गयी

इतना कसैला हो चुका है अब ज़बाँ का स्वाद
लहजे की जो मिठास थी जाने कहाँ गयी

जाने कहाँ कहाँ से खुला है मेरा बदन
इक शर्म ही लिबास थी जाने कहाँ गयी

Agricultural Extension

Improving livelihood of farmers through technology demonstration

❑ Tarun Adak, Anand Kumar Singh, Subhash Chandra, Arvind Kumar and Vinod Kumar Singh

आज भी भारतीय अर्थव्यवस्था देश के करोड़ो खेतिहर किसानों पर निर्भर है। ज्यादातर उचित तकनीकी ज्ञान के अभाव में किसानों का विकास एवं उनकी आय कम रह जाती है। किसान की सफलता उन्नत तकनीकी का सही समय पर प्रयोग पर भी निर्भर है। मृदा स्वास्थ्य कार्ड खेत प्रदर्शन, किसान संगोष्ठी, वैज्ञानिक–किसान बातचीत, जागरूकता अभियान, सफाई अभियान जैसे कार्यक्रमों के द्वारा लागों में बेहतर जागरूकता लायी जासकती है।

Indian economy is agriculture dependent and millions of farmers are actively engaged in farming. Many a time, lack of proper technology dissemination reduces the changes of growth engines, profitability of farming community. The profitability of successful orcharding lies on time bound application of improved technologies for the betterment of production. Small, medium and large farmers adopted different cultivation practices even under a smaller village pocket resulting into differential cost: benefit ratio.

Addressing to Media (DD, Lucknow) on production, protection and value addition of fruits for improving the farmers' income

Hon'ble Prime Ministers **"Mera Gaon Mera Gaurav"** programme is one of the National programme to address the problems of farming community, particularly socially backward and economically poor sections of the society. Slow pace of technological dissemination through Information and communication Technology also restricts the farmers' income. Different initiatives were taken care for the purpose of improving farm income through fielddemonst-rations and other events

In this programme, farmers were exposed to different kinds of technological advancement through knowledge of the different sections of farming community. Field demonstration, scientist-farmers interaction, kisan gosthies are some of the ways for transfer of technologies rapidly as well as to address the problems of the farming community.

Interaction with farmersat Pathak ganj, Malihabad, Lucknow

Farmers were demonstrated the soil sample collection and also ways to soil analysis. Soil chemical analysis was performed after which soil health cards were distributed. Based on sample analysis from each orchard, the requisite recommendations for nutrient management were advocated. In general, soil samples were deficient in soil organic carbon (12 mango orchards), and micronutrient like Zn (coefficient variations among the orchards 53.38 per cent). Farmers were advocated for Zinc sulphate and boron application in soil to improve the fruit production. Farmers were also sensitized about other general farm activities to be performed on real time basis, through agroadvisory services and local newspapers etc.

Address : ICAR- Central Institute for Subtropical Horticulture, Rehmankhera, Lucknow-226101, Uttar Pradesh, India *Corresponding author: singhakcish@gmail.com

जैव तकनीकी

जैव उर्वरक का प्रयोगः कृषक आय दोगुना करने में सहायक

❑ रणधीर नायक, आर. के. सिंह,
यस.के. यादव एवं एल.सी. वर्मा

Biofertilizers are the natural entities which are made up of microbes like bacteria, fungi, algae, etc. The biofertilizers can absorb atmospheric nitrogen or can ferment the organic or inorganic wastes or produce some specific chemicals which help in plant development and disease control. The biofertilizers are cheaper than chemical fertilizers. These fertilizers mainly include nitrogen fixing bacteria and phosphorus solubilizing bacteria. These biofertilizers can be easily made & utilize in agricultural crops as only 200 gm culture is needed for treatment of 10–15 kg of seeds. Use of biofertilizers not only saves the environment from chemical fertilizers but also increases the productivity & nutritional quality of crops; hence increase the income of farmers.

जैव उर्वरक/जीवाणु युक्त खाद एक प्राकृतिक उर्वरक हैं,जो कि एक या अधिक जैव प्रभावशाली सूक्ष्म जीवों जैसे वैक्टीरिया, कवक, काई की प्रजाति द्वारा निर्मित संरचना है,जो वायुमण्डलीय नाइट्रोजन को संरक्षित करते है, पौधों के पोषको को घुलनशील रुप प्रदान करते है,या जैव पदार्थ/कार्बनिक को गला सड़ा कर उनसे प्राप्त तत्वों को पौधें के लिए उपलब्ध करातें हैं या कुछ विशेष प्रकार के पदार्थ बनाकर पादप विकास को बढावा देते है, जैव उर्वरक ऐसे ही जीवाणुओं का उत्पाद है जो चारकोल/कोयला पाउडर जैसे पदार्थो के चूर्ण में मिश्रित कर तैयार किया जाता है।

जैवउर्वरक की जरूरत :

1. जैव उर्वरक बहुत ही सस्ते होतें हैं जिसके प्रयोग से रासायनिक उर्वरकों की मात्रा में भारी कमी की जा सकती है।
2. जैव उर्वरक पोषक तत्वों के अलावा विभिन्न प्रकार के हार्मोंस एवं विटामिन पौधों को उपलब्ध करातें हैं जिससे पौधों की वृद्धि अच्छी होती है।
3. जैव उर्वरक के प्रयोग से 10–15 प्रतिशत तक उत्पादन में वृद्धि लायी जा सकती है।
4. भूमि से उत्पन्न होने वाले पौधों को बीमारियों से रोकतें हैं, एवं भूमि की संरचना एवं उत्पादक क्षमता में वृद्धि होती है।
5. जैव उर्वरक के प्रयोग से उत्पादित अन्न एवं फल अधिक पौष्टिक होते है।

जैव उर्वरकों के प्रकार

1.वायुमण्डलीय नाइट्रोजन को भूमि में स्थिर करने वाले सूक्ष्म जीवः

- राइजोबियम कल्चर : दलहनी फसलों के लिए
- एजोटोबैक्टर कल्चर : सब्जियों व अन्य अनाजों के लिए
- एजोस्पारलम कल्चरः गेहूँ व अन्य अनाजों के लिए
- नील हरित शैवाल : मुख्यतः धान के लिए

2.फास्फोरस संचारक सूक्ष्म जीव

- फास्फो–बैक्ट्रीन टीका : फास्फेट विलेय हेतु अनेक फसलों के लिए
- माइकोराइजा कल्चर : मुख्यतया पौधशाला में भिन्न–भिन्न पौधे तैयार करने हेतु

राइजोबियम कल्चर

राइजोबियम कल्चर चारकोल/कोयला पाउडर एवं जीवाणुओं का मिश्रण है, जिसके प्रत्येक एक ग्राम भाग में 10 करोड़ से अधिक राइजोबियम जीवाणु होते हैं। इस कल्चर का प्रयोग मात्र दलहनी फसलो में ही किया जा सकता है। यह फसल विशिष्ट होती है, अर्थात् भिन्न–भिन्न फसलो के प्रति भिन्न–भिन्न प्रकार के राइजोबियम जीवाणु कल्चर का प्रयोग बीज उपचार, कम्पोस्ट खाद बनाने व भूमि उपचार आदि द्वारा किया जाता है। यह बीज के साथ प्रयोग करने पर बीज में चिपक जाते हैं। बीज अंकुरण पर ये जीवाणु जड़ के मुल रोमों द्वारा पौधों की जड़ों में प्रवेश कर ग्रन्थियों का निर्माण करतें हैं। यें ग्रन्थियाँ नाइट्रोजन स्थिरीकरण की इकाई है। पौधों की बढ़वार इनकी संख्या पर निर्भर होती है अर्थात् अधिक मात्रा में एवं विकसित ग्रन्थियाँ अधिक पैदावार की द्योतक है।

प्रयोग विधि

10–15 किग्रा बीज उपचारित करने के लिए, 200 ग्राम राइजोबियम कल्चर की आवश्यता होती है। 400 से 500

पता : कृषि विज्ञान केन्द्र, कोटवा आजमगढ़, E-mail: randhirnayak05@gmail.com

फसलो में प्रयोग

कम	राइजोबियम कल्चर के सूक्ष्म जीवाणु	दलहनी फसले	नाइट्रोजनस्थिरीकरण किग्रा./हे./वश
1.	राइजोबियम लेग्यूमिनोसेमरम	मटर,मसूर	80–150
2.	राइजोबियम फैजियोली	सेंम,मोंठ	30–50
3.	राइजोबियम ट्राइफोली	बरसीम	100–150
4.	राइजोबियम मैलीलोथी	रिजका,स्वीट फलोवर	85–150
5.	राइजोबियम ल्यूपिनी	ल्यूपिन	50–100
6.	राइजोबियम जैपोनिकम	सोयाबिन	65–130

मिली पानी में 500 ग्राम गुड़ या शक्कर डाल लें और उबाल दें ताकि पानी में मौजूद हानिकारक जीवाणु खत्म हो जायें फिर ठण्डा करके उसमें एक पैकेट 200 ग्राम राइजोबियम कल्चर डालकर अच्छी प्रकार घोल/लेइनुमा बना लेना चाहिए। बीजों को किसी स्वच्छ सतह पर एकत्रित करके, राइजोबियम कल्चर के घोल को उसके ऊपर धीरे–धीरे डालकर हाथ से तब तक मिलाएं जब तक सभी बीजों पर उसकी समान परत न बन जाये। अब उपचारित बीजों को किसी छायादार स्थान पर फैलाकर 10–15 मिनट तक सुखाकर तुरन्त बुआई कर देना चाहिए। राइजोबियम कल्चर 1.5 किग्रा प्रति हेक्टेयर के लिए पर्याप्त होता है।

राइजोबियम खाद के प्रयोग से लाभ

- इसके प्रयोग से 20–30 किग्रा प्रति हेक्टेयर रासायनिक नाइट्रोजन की बचत होती है।
- उपज में 15–20 प्रतिशत की वृद्धि होती है।
- राइजोबियम जीवाणु कुछ हारमोन्स एवं विटामिन भी बनाते है, जिससे पौधों की बढ़वार व जड़ों का विकास भी अच्छा होता है।
- इन फसलों के बाद बोई जाने वाली फसलों में भी भूमि की उर्वरा शक्ति अधिक होने से पैदावार अधिक मिलती है।

एजोटोबैक्टर/एजोस्पाइरिलियम जीवाणु कल्चर

यह खाद स्वतंत्रजीवी नाइट्रोजन स्थिरीकरण, जीवाणु का एक नम चूर्ण रुप उत्पाद है। इसके एक ग्राम में 10 करोड़ जीवाणु होतें है। यह कल्चर दलहनी जाति की फसल को छोड़कर अन्य किसी भी फसल में प्रयोग किया जा सकता है।

प्रयोग विधि

उपरोक्तानुसार (राइजोबियम कल्चर प्रयोग विधि के अनुसार)

एजोटोबैक्टर/एजोस्पाइरिलियम जीवाणु कल्चर से लाभ

- इसके प्रयोग से 10–20 प्रतिशत तक पैदावार में वृद्धि होती है।
- इसके प्रयोग से 20–30 किग्रा प्रति हेक्टेयर नाइट्रोजन की बचत भी की जा सकती है।
- इनके प्रयोग करने से फलो एवं दानों का प्राकृतिक स्वाद बना रहता है।
- इनके प्रयोग से अंकुरण शीघ्र व स्वस्थ होता है तथा जड़ों का विकास अधिक एवं शीघ्र होता है।
- इनके प्रयोग करने से पौधों एवं फसलों में रोग प्रतिरोधी क्षमता को बढ़ावा मिलता है।
- यह पौधों के विकास के लिए हारमोन तथा विटामिन उत्पन्न करता है।

नील हरित शैवाल

नील हरित शैवाल जैव उर्वरक प्राकृतिक ढ़ग से नाइट्रोजन प्राप्ति का मुख्य साधन है जो वायुमण्डल से नाइट्रोजन लेकर भूमि मे संचयित करता है। धान के खेत का वातावरण नील हरित शैवाल की वृद्धि के लिए उपयुक्त होता है। अतः धान की फसल के लिए बी.जी.ए. एक उचित जैव उर्वरक है। नील हरित शैवाल किसानों द्वारा स्वंय उत्पादित किया जा सकता है।

नील हरित शैवाल एक विशेष प्रकार की काई होती है। इसकी कई प्रजातियां होती है। जिसमें आलोसाइरा, नास्टाक, एनाबिना, साइटोनिमा इत्यादि प्रमुख है। नाइट्रोजन स्थिरिकरण की क्रिया शैवाल की संरचना में स्थित एक विशिष्ट प्रकार की कोशिका से होती है, जिसे हैटेरोसिस्ट कहतें है। यह सामान्य कोशिकाओं से संरचना एवं कार्य में कुछ भिन्न होती है। इसका निर्माण सामान्य कोशिकाओं में ही कोशिका भित्ती मोटी होने तथा कुछ आन्तरिक परिवर्तनो के फलस्वरुप होता है।

नील हरित जैव उर्वरक के लाभ :

1. नील हरित शैवाल जैव उर्वरक की 12.5 किग्रा प्रति हेक्टेयर की मात्रा 30 किग्रा प्रति हेक्टेयर नाइट्रोजन देता है। अतः रासायनिक नाइट्रोजन उर्वरक की मात्रा मे 30 किग्रा प्रति हेक्टेयर की बचत होती है।
2. इसके प्रयोग से प्रति हेक्टेयर लगभग 2–4 कुन्तल के हिसाब से अतिरिक्त उपज मिलती है।
3. इसके प्रयोग से भूमि की उर्वरा शक्ति बढती है तथा मृदा की भौतिक दशा में सुधार होता है।
4. कार्बनिक तत्वों की वृद्धि से मृदा के जल धारण क्षमता में वृद्धि होती है।
5. पौधों के लिए ग्राह्य फास्फोरस की मात्रा में वृद्धि होती है।

6. नील हरित शैवाल द्वारा विभिन्न प्रकार के अमीनो अम्ल, वृद्धि नियंत्रक, विटामिन बी–12 भी मिलते है, जो की अलग–अलग तरीको से पौधों को स्वस्थ रखते हैं एवं दानों की गुणवत्ता में वृद्धि करतें है।
7. यह काफी सस्ता है जिसे किसान स्वयं तैयार कर सकते है।

जैव उर्वरक बनाने की विधि :

1. खेत में खुले स्थान पर कम गहरी (लगभग एक फीट),एक मीटर चौड़ी तथा 5 मीटर लम्बी या सुविधानुसार क्यारियां बना लें।
2. क्यारियों में सफेद 400–500 गेज मोटी पोलीथीन बिछा लें।
3. इन क्यारियों को पक्की छत पर ईटों से जोड़कर बना सकते है। इसमें पॉलीथीन बिछानें की जरुरत नही होती है। कच्ची छत पर बनाने पर मोटी पॉलीथीन बिछाना चाहिए।
4. क्यारियों में प्रति वर्ग मीटर के हिसाब से 1–1.5 किग्रा खेत की मिट्टी, 100 ग्राम सुपरफास्फेट या ब्लड/हड्डी का चूरा तथा 4–5 इंच पानी (वातावरण की नमी या सुखे के आधार पर) भरकर अच्छी तरह मिला लें।
5. कीड़े– मकोड़ो से बचनें के लिए आधा चाय का चम्मच प्रति वर्ग मीटर के हिसाब से मैलाथियान या नीम तेल या 25 ग्राम नीम खली (10 ग्राम प्रति वर्ग मीटर के हिसाब से) मिला लें।
6. जब मिट्टी बैठ जाए तब शैवाल कल्चर 100ग्राम प्रति वर्ग मीटर के हिसाब से क्यारियों में बिखेर दें।
7. कुछ ही दिनों में शैवाल की मोटी परत क्यारियों में बन जाती है। यदि मोटी परत बनने से पहले पानी सुखने लगे तो क्यारियों में धीरे–धीरे पानी डाल दें। जब शैवाल की मोटी परत बन जाये तो पानी डालना बन्द कर दें। अब क्यारियों को सुखने के लिए छोड़ दें।
8. पूर्णतया सूख जाने पर शैवाल की परत पपड़ियों के रुप में टूट जाती है। इन सूखी पपड़ियों को पॉलीथीन बैग में भरकर खेत में प्रयोग के लिए रख लें।

सावधानियाँ

1. क्यारियों में डाली जाने वाली मिट्टी साफ तथा भुरभुरी होनी चाहिए।
2. नाइट्रोजन उर्वरकों का प्रयोग क्यारियों में न करें।
3. शैवाल की पपड़ियों की थैलियों को नमी से दूर रखें।

एजोटोबैक्टर तथा फास्फोरस संचारक जैविक खाद की प्रयोग विधि एवं मात्रा

क्रम	बीजोपचार	पौध जड़ उपचार	कन्द उपचार	मृदा उपचार
विभिन्न फसलो में प्रयुक्त मात्रा				
गेहूँ, ज्वार	1किग्रा./एकड़	–	–	3.5किग्रा/एकड़
मक्का, कपास	500ग्राम/एकड़	–	–	तदैव
सुरजमुखी/सरसों	200ग्राम/एकड़	–	–	तदैव
धान	–	1.5–2.0कि./एकड	–	तदैव
मिर्च, टमाटर	–	1.5–2.0कि/ एकड़	–	तदैव
बैंगन, गोभी, प्याज	–	–	2.0कि./एकड़	तदैव
आलू				
प्रयोग, विधि	उपरोक्तानुसार जैव उर्वरक की मात्रा, को 1.5 ली. पानी में घोल बनाए इसके उपरान्त बीज ढेर में घोल डालकर बीजों पर पर्त चढायें तथा बीजों को छाया में सुखाकर बुवाई कर दें।	उपरोक्तानुसार जैव उर्वरक को 4 ली. पानी में घोल बनायें तथा पौधों की जड़ों को 10–15 मिनट तक डुबोकर उपचार करें फिर उपचारित पौधे की तुरन्त खेत में रोपाई कर दें।	उपरोक्तानुसार 15ली. पानी में मिलाकर घोल बनायें। तैयार घोल में 25–30 मिनट तक कन्दों को डुबोकर रखें तथा बीजों को छाया में सुखाकर उपचारित कन्दों की बुआई करें।	उपरोक्तानुसार जैव उर्वरक की मात्रा को 50–60 किलो कम्पोस्ट या भुरभुरी मिट्टी में मिलाकर अन्तिम जुताई के समय अथवा फसल की पहली सिंचाई से पूर्व समान रूप से 1 एकड़ खेत में छिड़ककर मिट्टी में मिला दें।

पर्यावरण प्रदूषण

प्रदूषण और पर्यावरणीय मूल्य

❑ मोहम्मद इक़बाल

Abstract :
Values are often invoked in discussions of how to develop a more sustainable relationship with environment. It is unavoidable to have a clean and pure environment for living beings. Teachers' should be emphasis on to develop environmental values in the students to maintain the healthy and clean environment. Through which is not only aware but also contributes positively to environmental protection.

मनुष्य इस सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है। सृष्टि के आरम्भ से ही मनुष्य को यदि किसी वस्तु ने सबसे अधिक प्रभावित किया है तो वह उसका पर्यावरण ही है। इसका दूसरा पक्ष यह है कि मनुष्य ने भी पर्यावरण को बहुत अधिक प्रभावित किया है और इसके प्राकृतिक स्वरुप को क्षत्–विक्षत् किया है। जिसके परिणाम स्वरुप प्रदूषण जैसी विश्व व्यापी दानवी समस्या हम सभी के समक्ष उपस्थित है। प्रसिद्ध पर्यावरण वैज्ञानिक **इ0पी0 ओडम** ने प्रदूषण को निम्न शब्दों में परिभाषित किया है – **''प्रदूषण का तात्पर्य वायु, जल या भूमि (अर्थात् पर्यावरण) की भौतिक, रासायनिक या जैविक गुणों में होने वाले ऐसे अनचाहे परिवर्तन हैं जो मनुष्य एवं अन्य जीवधारियों, उनकी जीवन परिस्थितियों,औद्योगिक प्रक्रियाओं एवं सांस्कृतिक धरोहरों के लिये हानिकारक हो।''**

ज्ञातव्य है कि आज प्रदूषण रुपी दानवी समस्या से केवल एक नगर या राज्य ही प्रभावित नहीं है वरन् सम्पूर्ण जगत प्रभावित है। हम मनुष्यों ने औद्योगीकरण, नगरीकरण एवं तकनीकीकरण के नाम पर पर्यावरण को इतना दूषित कर डाला है कि आज जीवन के लिए आवश्यक शुद्ध जल, वायु एवं खाद्य सामग्री के संकट का सामना करना पड़ रहा है। मनुष्य ने पर्यावरण का अहित करने वाले अपने कार्यों के द्वारा पर्यावरणीय सम्बन्धी अनेक समस्याओं– ग्रीन हाउस प्रभाव एवं ग्लोबल वार्मिंग, ओजोन परत का क्षय, रेडियोधर्मी प्रदूषण, स्मोग घटनाएँ, ध्वनि प्रदूषण, मृदा प्रदूषण, जल प्रदूषण, एवं वायु प्रदूषण आदि को जन्म दिया है। इन पर्यावरणीय समस्याओं ने न केवल मनुष्य के स्वास्थ्य के लिये हानिकारक गम्भीर समस्याएँ – टी0बी0, दमा, तपेदिक, त्वचा, हृदय एवं श्वांस सम्बन्धी रोग और विभिन्न प्रकार के मानसिक रोगों को जन्म दिया है वरन् विभिन्न प्रकार की प्राकृतिक आपदाओं – बाढ़, सूखा, भूकम्प, भूस्खलन एवं सुनामी आदि को भी जन्म दिया है। प्रतिवर्ष लाखों लोग इन प्राकृतिक आपदाओं की चपेट में आकर काल के गाल में समा जाते हैं। हम मनुष्यों ने प्रकृति प्रदत्त जीवन के लिये अनिवार्य एवं निःशुल्क प्रर्यावरणीय उपहारों – भूमि, जल, वायु, एवं वन आदि का दुरुपयोग किया और इनके शुद्धतम प्राकृतिक स्वरुप को सुरक्षित रखने में हम असफल रहे। हमने न सिर्फ नदियों के जल को दूषित किया वरन् भूगर्भ के जल को भी प्रदूषित कर डाला है। परिणाम यह है कि अधिकांश आबादी को पीने योग्य शुद्ध पेयजल उपलब्ध नहीं है। विद्वानों का तो यहाँ तक कहना है कि अगला विश्व युद्ध पानी को लेकर होगा। इसी के साथ हमने अपने वायुमंडल को भी असंतुलित किया है जिसके परिणामस्वरुप वायुमंडल में हानिकारक गैसों की मात्रा में वृद्धि हुई है और जीवन के लिये आवश्यक आक्सीजन गैस की मात्रा में ह्रास हुआ है। औद्योगीकरण एवं नगरीकरण के नाम पर जंगलों को समाप्त किया गया। अपने व्यक्तिगत लाभ के लिये विशाल वृक्षों को काटा गया और उनके स्थान पर अपने–अपने घरों में साज–सज्जा के नाम पर गमलों में छोटे–छोटे पौधों को लगाया गया। विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या उन विशाल वृक्षों का स्थानापन्न ये गमले वाले लघु पौधे हो सकते हैं? नहीं ये कदापि नहीं हो सकते हैं। पर्यावरण संतुलन में हो रहे बिखराव व बदलाव के कारण जैव विविधताओं के मध्य कड़ियां टूट रही हैं। पारिस्थितिकी तंत्र निरंतर असंतुलित होता जा रहा है। आज आवश्यकता इस बात की है कि पारिथितिकी तंत्र को संतुलित रखने में समाज के सभी नागरिक अपने–अपने उत्तरदायित्व को समझे क्योंकि पर्यावरण प्रकृति प्रदत्त समाज के सभी नागरिकों के लिये साझी विरासत है न कि व्यक्तिगत संपत्ति। हम सभी को पर्यावरण को सुरक्षित एवं स्वच्छ रखना होगा। पर्यावरण की स्वच्छता एवं सुरक्षा को केवल सरकार या स्वयंसेवी संस्थाओं या कतिपय संघटनों के भरोसे नहीं छोड़ा जा सकता है बल्कि समाज का प्रत्येक नागरिक पर्यावरण की महत्ता को समझे और उसे सुरक्षित

पता : प्रा0 वि0 औसेर, जनपद– कन्नौज, उ0 प्र0

रखने के लिए एक जन आन्दोलन चलाया जाना चाहिये जिसमें समाज के सभी वर्ग के लोगों की भागीदारी सुनिश्चित हो। इस जन–आन्दोलन के द्वारा प्रत्येक नागरिक पर्यावरण को सुरक्षित रखने के स्वयं के उत्तरदायित्व का पूर्ण निष्ठा एवं ईमानदारी से निर्वहन करे।

समाज के सभी नागरिकों में पर्यावरणीय चेतना और पर्यावरणीय मूल्य विकसित करने में विद्यालयी शिक्षा प्रभावी भूमिका का निर्वहन कर सकती है और यह कार्य प्राथमिक शिक्षा से ही प्रारम्भ होना चाहिये। ध्यातव्य है कि शिक्षा का अधिकार कानून 1 अप्रैल 2010 से लागू किया गया है जिसके अन्तर्गत राज्य 6–14 वर्ष तक के बच्चों को अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा देने के लिए बाध्य है। चूंकि वर्तमान समय में राज्य के द्वारा प्राथमिक शिक्षा समाज के सभी वर्ग के बच्चों को अनिवार्य एवं निःशुल्क रुप से उपलब्ध है। अतः प्राथमिक शिक्षा के द्वारा समाज के सभी वर्ग के बच्चों में पर्यावरणीय चेतना और मूल्यों को विकसित करना आसान होगा। **जे0एस0राय** ने पर्यावरणीय मूल्यों को निम्न शब्दों में परिभाषित किया है – **''वे मूल्य जो हमारे पर्यावरणीय चिंतन और व्यवहार को दिशा प्रदान करते हैं पर्यावरणीय मूल्य कहलाते हैं।''**

छात्रों को पर्यावरणीय चेतना और मूल्यों हेतु जागरुकता की शिक्षा प्रदान करने से पूर्व शिक्षक में पर्यावरणीय चेतना और मूल्यों का होना अत्यंत आवश्यक है क्योंकि वास्तव में शिक्षक न केवल अपने छात्रों के लिए बल्कि सम्पूर्ण समाज के लिए भी एक आदर्श व्यक्तित्व होता है। यदि शिक्षक पर्यावरण प्रेमी है और उसका व्यवहार पर्यावरणीय नियमों, आदर्शों एवं सिद्धांतों से निर्देशित होता है और वह पर्यावरणीय मूल्यों को महत्व देता है तो वह पर्यावरण को संरक्षित एवं स्वच्छ रखने वाले अपने कार्यों से न केवल अपने छात्रों में वरन समाज के व्यक्तियों में भी पर्यावरणीय चेतना और मूल्यों का विकास कर सकता है। शिक्षक को आरम्भ से ही छात्रों को पर्यावरण को स्वच्छ एवं संरक्षित रखने की दिशा में प्रेरित करना चाहिये। छात्रों एवं उनके अभिभावकों में पर्यावरणीय जागरुकता का संचार करे जिससे उनमें पर्यावरणीय मूल्यों का विकास हो सके और वे पर्यावरण की महत्ता को समझे ताकि पर्यावरण को स्वच्छ एवं संरक्षित रखने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सके। शिक्षकों को चाहिये कि समय–समय पर विद्यालय प्रांगण में वृक्षारोपण किया जाये तथा वृक्षारोपण एवं सामाजिक वानिकी पर संगोष्ठी आदि का आयोजन करके इनके लाभों से समाज के प्रत्येक नागरिक को अवगत करायें। इसके साथ ही समुदाय की भागीदारी से वृक्षों एवं जंगलों की अवैध कटान से रोका जाये। वृक्षों एवं जंगलों की सुरक्षा हेतु लोगों को अभिप्रेरित किया जाये।

इस प्रकार यदि प्राथमिक शिक्षा से ही बच्चों में पर्यावरणीय जागरुकता और मूल्यों का संचार किया जाता है तो माध्यमिक स्तर पर बच्चों में पर्यावरणीय मूल्यों के सम्बन्ध में स्थायित्व प्रदान किया जा सकता है। क्योंकि आरम्भिक काल में बच्चों पर पड़ने वाले प्रभाव अमिट होते हैं। अंततः बालक से व्यस्क होने की उम्र तक आते–आते इन बच्चों को न सिर्फ पर्यावरण की महत्ता का अच्छा–खासा ज्ञान हो जाता है बल्कि वो ज्ञान उनकी परम्पराओं और मूल्यों का स्थान ग्रहण कर लेता है। इस प्रकार यदि हम बच्चों के व्यक्तित्व में पर्यावरणीय मूल्यों का प्रतिमान स्थापित कर देते हैं तो उस स्थापित पर्यावरणीय मूल्य प्रतिमान के द्वारा व्यस्क होने के उपरांत भी उनका व्यवहार पर्यावरण को संरक्षित एवं स्वच्छ रखने वाला होगा। और अंततः प्रदूषण पर विजय प्राप्त करके पर्यावरण को स्वच्छ एवं संरक्षित कर सकते हैं।

सन्दर्भ सूची :

गोयल, एम0के0 (1997) : पर्यावरण शिक्षा, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा

ओझा, एस0 के0 (2017) : पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण, बौद्धिक प्रकाशन, इलाहाबाद

इकबाल, मोहम्मद (2014) : पर्यावरणीय मूल्य एक अध्ययन, वाङ्मय प्रकाशन, अलीगढ़

पेड़ लगाये पर्यावरण बचायें।

Biodiversity

Glimpses of human created Agri-Biodiversity in Tasmania (Australia)

❑ **R. C. Chaudhary**

तस्मानिया आस्ट्रेलिया के दक्षिण में बसा हुआ द्वीप है जोकि अपने असीम और अद्वितीय जैवविविधता के लिये जाना जाता है और बहुत से संरक्षित पार्क से भरा हुआ है। तस्मानिया की मिट्टी बहुत उपजाऊ नहीं है परन्तु चारागाह, उद्यानों और जंगलों के विकास के लिये उपयुक्त है। यहां बहुत सी अनोखी प्रजातियों की सब्जियां भी उगायी जाती हैं। यहां बहुत ही सुन्दर, हरे–भरे वन एवं मिलन सार लोग मिलते हैं।

It was short visit of July 2018 to the enchanting landscape of Tasmania, an Island of Australia, located between mainland Australia and New Zealand. Tasmania, an isolated island state off Australia's south coast, is known for its vast, rugged wilderness areas, is largely protected within parks and reserves. Tasmania is named after a Dutch explorer Dutch explorer Abel Tasman, who made the first reported European sighting of the island on 24 November 1642, although Indian ships have been visiting the island since last 3,000 years. Once upon a time British had made it a "Penal Settlement" (Kalaapaani). With a land area of 68,401 km², it is inhabited by about 5.15 lakhs of very friendly people. Capital of the state is Hobart, which has almost 45% of the island's population.

The Aboriginal population in Tasmania was estimated to have been between 3,000 and 7,000 at the time of colonization by British, but was almost wiped out within 30 years. The last of about 1,000 aborigines were completely eradiated in 1831. Historians described it as an act of genocide by the British.

Earlier I had heard of Tasmanian Devil (small nocturnal animal with jaw strength of 750 kg per square inch to crack any bone), and can consume meat equal to 25% of its own body weight in 15 minutes (see photo). We had also heard of Tasmanian Tiger (see Photo) which is believed to be extinct now, and Dingo (dog like animal) introduced from India 3,000 years ago. It is ferocious and man has not been able to domesticate it.

Tasmania's soils are not deep and less fertile due to sever leaching but support pastures and orchards (apple, blue berries, grape etc). Most of these lands are thus not used for agriculture, but there is much productive forestry—, which remains one of the state's major industries. Some soils are highly acidic and fix phosphate very effectively, and used for dairying, beef cattle and fodder crops. Some grain crops are also grown in the driest areas. In the alluvial areas of south-eastern Tasmania, rich alluvial soils permit apples to be grown.

Most cities of Australia including Hobart have weekly Farmers Market on every Friday where farmers bring their produce and consumers buy directly from them. It was amazing to see the varieties of vegetables cultivated there. Never in my life I saw black tomato, although I had seen yellow, light red and deep red in cherry types. Equally amazing was "Rainbow" carrot which had all shades from white like radish to purple-black. Same was the case with beet root and turnip. Cauliflower, which in our country curd of white colour, there had yellow, green and purple colours. I asked the farmers why they grow these? Their answer was "plant breeders create these, consumer prefer for various medicinal properties and health reasons" and we grow it for them. I was wondering that nature created variability in plants over a period of millions of years, and plant breeders did better trick in a few years of time only. Needless is to mention how clean Tasmanian villages, farms and country sides are? May be India "Swachh Bharat Abhiyan" can attain that if people here cooperate and behave

I took my ship journey back to mainland Australia leaving behind neat, clean landscape and friendly people of Tasmania. Throughout I was wondering what wonderful things disciplined and courageous man can create ?

Address: Participator Rural Development Foundation (PRDF), Gorakhpur 273014 E-mail: ram.chaudhary@gmail.com

Air Pollution

What You Are Breathing?

❑ **Priya Singh and Omkar**

वायु प्रदूषण जोकि मुख्यता कारखानों व वाहनों के धुएं से एवमं कृषि अवशेषों को खेतों में जलाने के कारण होता है। वायु प्रदूषण आज भयानक रूप ले चुका है। आज के वातावरण में वायु सांस लेने लायक नहीं रह गई है एवं कई गम्भीर बीमारियों का कारण बन चुका है। वायु प्रदूषण को कम करने के लिए विश्व की कई संस्थाएं साथ मिलकर काम कर रही हैं तथा समय समय पर प्रदूषण डाटा एवं उससे निपटने के उपायों पर शोध पत्र प्रकाशित कर रही हैं ताकि आने वाले समय में सांस लेने के लिए शुद्ध वायु भी मिलती रहे, एवं हमारा भविष्य स्वस्थ बना रहे।

In relation to the changes in atmospheric conditions human behaviour has gradually transformed over the last few decades. The emissions from industries, automobiles, agricultural practices, transportation and the urban development have intensified the levels of harmful gases and particulate matters in the surroundings which are in turn getting unsafe for us. The aim of this article is to explore the reasons behind gradual increase in air pollution and their possible remedies. The air quality monitoring stations indicate that there is unhealthy air quality index throughout the year which in turn leads to harmful effects over the health of local residents. Increased risk of cancer, respiratory, cardiovascular and skin diseases have also been reported due to high air pollution, Thus for healthy environment, preventive measures can be taken up, such as planting trees, using public transport, use of bicycle, burning less coal, recycling and reusing the things for the clean and green Lucknow.

Pollution: A worldwide nuisance

We all live and share everything of the planet earth. What is happening in one area will affect the other no matter how far are they. There are many kinds of pollution we face in our daily life, but the one that has mostly affected us is air pollution. Any chemical, physical (particulate matter), or biological agent that modifies the natural characteristics of the atmosphere is considered as pollutant. Air pollution has been defined as, "any solid, liquid or gaseous substance including noise present in atmosphere in such concentration that it tends to be injurious to human beings or other living creatures of the atmosphere".

Worldwide survey has revealed that air pollution is responsible for number of cases of deaths, respiratory and cardiovascular diseases. New estimates of

Address: Ladybird Research Laboratory, Department of Zoology, University of Lucknow, Lucknow-226007, India
Email: priyariea@gmail.com, omkaar55@hotmail.com

World Health Organization (WHO) show that nine out of 10 people in the world breathe air containing high levels of pollutants. Air pollutants involve gaseous pollutants, odours and suspended particulate matter (SPM) such as dust, fumes, mist, and smoke (Table 1). The largest sources of air pollution created by human beings are installation of industries and transportation that use a great deal of energy sources in their daily activities. Based on these sources and their interactions with other components present in the air, they may vary in their chemical compositions and may show severe impacts on health. Over exposure of carbon monoxide may be fatal for individuals. According to WHO 43% of deaths occur due to lung disease, 29% due to lung cancer, 24% from strokes and 25% due to heart diseases. WHO air quality model also confirms that 92% of the world's population lives in places where air quality levels exceed "WHO's Ambient Air quality guidelines" for annual mean of particulate matter with a diameter of less than 2.5 micrometres Particulate Matter (PM 2.5). WHO guideline limits for annual mean of PM 2.5 are 10 μg/m3 annual mean.

Damage of stratospheric ozone layer has also been identified as serious threat to the earth's ecosystem. Majority of stationary sources are often recognized as a great source of air pollution. However, the greatest sources of emissions are actually automobiles which release hydrocarbons, nitrogen oxide, sulfur dioxide, carbon monoxide and particulate matters in large amounts. As for the healthy survival of the living things, clean air is the prior requirement and for this air quality standards, like the Clean Air Act (1970) in the US and Air Act in India (1981), have been enforced to reduce the presence of some pollutants. Presently "Breathe Life" a global

Table 1: Major air pollutants, sources and their effects on human and their welfare

Pollutant	Properties	Sources	Health Effects	Welfare Effects
Carbon Monoxide (CO)	Colorless, odorless gas	Motor vehicle exhaust, indoor sources include kerosene or wood burning stoves	Headaches, reduced mental alertness, heart attack, cardiovascular diseases, impaired fetal development death	Contribute to the formation of smog
Sulfur Dioxide (SO_2)	Colorless gas that dissolves in water vapor to form acid, and interact with other gases and particles in the air	Coal-fired power plants, petroleum refineries, manufacture of sulfuric acid and smelting of ores containing sulfur	Eye irritation, wheezing, chest tightness, shortness of breath, lung damage	Contribute to the formation of acid rain, visibility impairment, plant and water damage
Nitrogen Dioxide (NO_2)	Reddish brown, highly reactive gases	Motor vehicles, electric utilize and other industrial commercial and residential sources that burn fuels	Susceptibility to respiratory infections, irritation of the lung and respiratory symptoms (e.g. cough, chest pain, difficulty breathing)	Contribute to the formation of smog, acid rain, water quality deterioration, global warming and visibility impairment
Ozone (O_3)	Gaseous pollutant when it is formed in the troposphere	Vehicle exhaust and certain other fumes. Formed from other air pollutants in the presence of sunlight	Eye and throat irritation, coughing, respiratory tract problems, asthma, lung damage	Plant and ecosystem damage
Lead (Pb)	Metallic element	Metal refineries, lead smelters, battery manufacturers, iron and steel producers	Anemia, high blood pressure, brain and kidney damage, neurological disorders, cancer, lowered IQ	Affects animals and plants affects aquatic ecosystems
Particulate Matter (PM)	Very small particles of soot, dust, or other matter, including tiny droplets of liquids	Diesel engines, power plants, industries, windblown dust, wood stoves	Eye irritation, asthma, bronchitis, lung damage, cancer, heavy metal poisoning, cardiovascular effects	Visibility impairment, atmospheric deposition, aesthetic damage

(http://www.health.nsw.gov.au/environment/air/Pages/common-air-pollutants.aspx)

communications campaign is rolling out by WHO to increase public awareness of air pollution as a major health and climate risk.

In India air pollution is being a serious issue with the major sources including fuel-wood and biomass burning, fuel adulteration, vehicle emission and traffic congestion. Especially during autumn and winter seasons, large scale crop residue burning in agriculture fields and low cost alternative to mechanical tilling is a major source of smoke, smog and particulate pollution.(5) Major Indian cities including Delhi, Kolkata, Mumbai and Chennai consistently found worse in every year over 5-year period (2004–2008). In which Delhi was found worst and Kolkata was a close second, followed by Mumbai and Chennai. In May 2014, the WHO announced New Delhi as the most polluted city in the world. In November 2016, the Great smog of Delhi was an environmental event which covered New Delhi and the adjoining areas around in a dense blanket of smog. Air pollution in 2017 found to be highest on both PM 2.5 and PM 10 levels. It has been reported as one of the worst levels of air quality in Delhi since 1999.

Status of Air Pollution of Lucknow city

A recent study by WHO (2018) in top 15 most polluted cities of the world, 14 belong to India. Lucknow city the capital of Uttar Pradesh is one of them. Which has a population of 2.82 millions as per 2011 census. The other causes which contribute to the increased amount of carbon in atmosphere includes high rate of deforestation to build the colonies, parks, malls and highways. It was stated by the Ministry of Environment and Forests (MoEF) that, if a 50 years old tree is cut, it values for 50,000 bucks while if it is left standing, it will value for 25 lakhs.

Table 2: National Ambient Air Quality Standards (NAAQS)

Pollutants ($\mu g/m^3$)	Time Weighted Average	Concentration in Ambient Air	
		Industrial, Residential, Rural and other areas	Ecologically Sensitive Area (Notified by GOI)
Sulfur dioxide	Annual *	50	20
	24 Hours **	80	80
Nitrogen dioxide	Annual *	40	30
	24 Hours **	80	80
Particulate matter, Size less than 10 µm (PM 10)	Annual *	60	60
	24 Hours **	100	100
Particulate matter, Size less than 2.5 µm (PM 2.5)	Annual *	40	40
	24 Hours **	60	60
Ozone	Annual *	100	100
	24 Hours **	180	180
Lead	Annual *	0.50	0.50
	24 Hours **	1.0	1.0
Carbon monoxide (mg/m^3)	Annual *	02	02
	24 Hours **	04	04
Ammonia	Annual *	100	100
	24 Hours **	400	400
Benzene	Annual *	05	05
Benzo(a)pyrene	Annual *	01	01
Arsenic	Annual *	06	06
Nickel	Annual *	20	20

*Annual Arithmetic mean of minimum 104 measurements in a year at a particular site taken twice a week 24 hourly at uniform Intervals. **24 hourly or 8 hourly or 1 hourly monitored values, as applicable, shall be complied with 98% of the time in a year. 2% of the time, they may exceed the limits but not on two consecutive days of monitoring. (http://www.dmc.kar.nic.in/Pollution.pdf)

Preventive Major to Control Air Pollution

On the personal level, reduced use of automobiles, recycling and reuse of products, and conservation can reduce a person's carbon footprint. At national level the draft action plan entitled "Breathe India" proposed by Niti Aayog includes encouraging electric vehicles, phasing out private diesel vehicle and development of crop residue utilization policy. With this, in past few years the forest cover of India gets increased as per report published by Ministry of Environment, forest and Climate Change.

While other preventive measures can be to protect forest cover, use of public transport, use of solar energy, use of energy efficient vehicles, consider "going green, use natural gas instead of charcoal, do regular car check up, keep car tires properly inflated, don't use hazardous chemicals, get an energy audit done, buy items made from recycled materials, buy rechargeable batteries, buy energy star products, educate your companions, join an environmental group.

To make the city cleaner the local pollution regulatory authorities are not taking serious steps towards the pollution control in the city. The exiguity of the rules, awareness programs need to be established to create awareness among people.

We can do a lot more to reduce air pollution by following many little steps. Using public transport, riding cycle, planting trees, burning less coal on barbeque, recycling and reusing the things etc. are such steps to create a healthy and better

environment for ourselves and for the future generations. Our little acts can save thousands of people who die due to cancer, heart attack, asthma and other air borne diseases. The figures are definitely striking all over the world. So let your action do some act of heroism and make this world a healthier, safer and pollution free world live in.

Total Forest Cover of India

State of forest report	Forest cover (ha)	Percent of forest cover to the total geographical area
1987	640819	19.49
1989	638804	19.43
1991	639364	19.45
1993	639386	19.45
1995	638879	19.43
1997	633397	19.27
1999	637293	19.39
2001	653898	19.89
2003	677816	20.62
2005	690171	21
2009	692394	21.06
2011	692027	21.05
2013	697898	21.23
2015	701673	21.34

क्या आप जानते हैं ?

भारत की जनसंख्या विश्व में चीन के बाद दूसरे नम्बर पर सबसे अधिक है, अतः इतने बड़े देश में बैलेट पेपर से वोटिंग कराने पर टनों पेपर की जरूरत पड़ती है। एक अनुमान के अनुसार इलेक्ट्रानिक वोटिंग मशीन से वोटिंग करने पर हम सभी लगभग 10,000 टन पेपर की बचत करते हैं, जिससे लगभग 15,000 पेड़ों को कटने से बचाया जा सकता है।

भोजपुरी उपन्यास अंश

पिछले अंक से जारी

ग्राम देवता - तिकड़म के तीन छोर

❑ रामदेव शुक्ल

पिछले अंक में आप ने जातीय व्यवस्थाओं और रूढवादी परमपराओं में जकड़ी पंचायतों के बारे में पढ़ा। गाँव में किस तरह से लोग जाति का गलत प्रयोग कर लोगो को दिगभ्रमित करते हैं इसका उल्लैख था। **अब इस अंक में आगे पढिए.....**

गांव गंवई का छोटका लइकन के कवनों कार नाहीं होला। जवन बहुते गरीब बाड़ें ऊं तऽ पेट से बहरा होखते माई बापे के साथे खरिहाने में जूझे लागेलें। ई बाति पेटभरावन वालन के हउवे। जेकरीं घरे दूनों जून चूल्हि जरि जाले आ जातियों के बड़का कहालें, ओह लोगन के लइका लोग गरोह बनाके यह सिवान से ओह सिवान ले घुमलही में दिन काटि देलें। गरमी के दिन में माने चइत–बइसाख में खेत खाली हो गइलें पर दस बारह लइका आ दू चारि गो कुक्कुर सरेहे भरि धावत मिली जइहें। जहां–जहां आम जामुनि के पेंड़ लउकी ओपर झटका–ढेला मारि–मारि के रखवारन के नकुना परान कऽ देई लोग। बरखा के दिन में ईहे गोल सरेही में मछरी मारे में आगे रहेले। जवन छोटकी गोल हऽ ऊ गड़ही गड़ही में चभकत रहेने। जड़काला में इहे गोलिया ऊखि आ चना मटर की खेतन पर टूटि परेला। एही गोलिया में के ऊ लोग जे आपन आपन खेत रखावेला ऊ आंखि बचा के दुसरका की खेतवा में कुछु न कुछु लपकि लेला। जेकरी घर में एक गोल लायक इका नइखें, ओकरा खेत में एह लोगन के सुराजे मिलि जाला। फागुन चढ़ते मटर उखारि के होरहा लागेला आ चइत लगते चना के कांच पाकल डांठि उखारि के भुजाला।

एक लइकन के पेट भरल होखे चाहे नाहीं भरल होखे, देहीं पर लुग्गा कपड़ा रहे चाहे नाही रहे– मनसाइन के कमी कब्बो नाही रहेला। दिन दिन भरि उघारे निघारे घुमल आ कवनो बाति के मनसाइन बना लीहल एक लोगन के बांवा हाथे के खेला हवे। गांवें में भालू बानर ले के मदारी आइल होखे, अस्सी मन के धोबिन आ हबड़ा के पुल देखावे वाला नजरबन्न होखे, केहू के घरे चसमा बूट आ घड़ी लगवले पहुना आइल होखे, चाहे सरंगी बजावत जोगी होखे, करताल बजावत गोसाई होखे, चाहे कवनो बड़रहा मनई होखे– सबकी पाछे पाछे ई गरोह नाचत गावत घूमत रहेला। ई लोग सब जगह रहेला, सब जूनि पर रहेला।

जब गांवे में केहू एतना बेराम हो जाला की सहर से डकवर बोलावल जालें, तब एक लइकन के सबसे नींक मनसाइन होला। भर्र–भर्र करति मोटर गाड़ी की आगे–पीछे, दहिने–बांवे लइके लइका। डलेवर केवनो जतन करें, केतनो हुसियार होखें, लइकन के बनरसेना के आगे उनके नकुरापन ढेकि जाला। जेकरे घर में बेराम मनई परल बाऽ ऊहो अदिमिया डकदर बाबू के मोटरवा में बइठल रहेला तऽ ओकर परान अफना जाला। उतरि के एक दू जने के धऽ के दू–चारि मुक्का घमसा देला तब भीरि छितिरा जाले बाकी ओह मनई की मोहरवा में बइठते बउली की पानी पर ढेला फेंकले से छितिराइल काई की लेखा तुरन्ते जूटि जालें कुलि।

आजु काल्हि सहर आ कसबा सड़की पर टिकठी के भरमार हो गईल बाऽ। जहें देखऽ तहें भुर्र भुर्र! गउंवों में एक दू गो कब्बो आ जाले। सहरी से कमा के लवटे वाला कमासुत लोग पहिले पैदल आवें, एक्का पर आवें, बादि में रेकसा पर आवें आ आजु काल्हि टिकठी पर आवेला लोग। जे हुसियार होला ऊ कहेला–'टिकठी काहे बोलता है। बैकूफ! टिकसी बोलो। नाहीं तो जीप गाड़ी बोलो।' जेकरा जवन मन करे, ऊ तवन कहे, लइकवा तऽ 'टिकठी आइल, टिकठी आइल' ईहे कहते दउरे लागेलन। कई बेर तऽ सेयानों लोग हाथे के कार–धार छोड़ि के टिकठी देखे लागेलें। ओह में से उतरे वाला देसी साहेब लोग के बड़ा खराब लागेला लइकन के हल्ला, बाकी करें त का करें?

इस साइत एक गांव में तऽ रोज राती के एगो टिकठी आवे लागलि बा। मालिक के बड़का बाबू जब कसबा में पी के टुन्न हो जालें तऽएह लाएक नाहीं रहि जालें की पैदल चलें। कवनो न कवनो टिकठी वाला लादि के उनके घरे चहुंपा देला। जबसे मालिक बाबा मुअलें तबसे जवार पथार में नवका मालिक के नांव बाजि गइल बा। दू चारि कोसके केहू गुण्डा–चोर–बदमास अइसन नइखें जे नवका मालिक के सलाम न बजावे। टिकठिया वाला तऽ बड़का बाबू के नांव पर केहू के कुच्छो बुझत नइखन। कवनो टिकठी वाला के केहू कुच्छो कहि के तऽ देखो। एही ऐ बड़का बाबू के ई बड़हन एहसान बाऽ कि रोज राती के लइकन के टिकठी के पाछे पाछे दउरे के मौका मिलि जाला। उनके दारु पियले से अउरी लोग चाहे जइसन माने लइका बहुते खुस बाड़ें सऽ। राती के टिकठी देखले के मजबे दोसर हऽ। जब 'लैट' से आंखि चोन्हरिया जाला तब एन्ने ओन्ने उदरलेके आ एन्नै ओन्ने धकियवले गिरले के मजा, का पूछे के। कब्बो–कब्बो तऽ अइसन बुझाला कि आगे–आगे रोसनी के नद्दी उमड़ति जाति बाऽ, आ पाछे–पाछे लइकन के कोवारोर बढ़त जात बा।

आजु तऽ मजा सबेरवें मिलि गइल। जाड़े के बिहाने लइका घाम घमौना करत रहलें कुलि, एही बिच्चे भर्र–भर्र करति टिकठी महरानी के दरसन हो गइल। घामे के मोह छोड़ि–छोड़ि लइका भगलें आ टिकठी घेरा गइलि।

टिकठी की ओर देखि के सभी अकबका गइल। बाति काऽ हऽ। आजु टिकठी में न कवनों आला लटकवले डकदर बइठल बो, न पुलिस दरोगा बा, न बड़के बाबू मुहें ही भरे पटाइल बाड़ें। ई अजगुत। आजु डरेबर के बगल में एगो नवका साहेब बइठल बा। सूट बूट में फिट्ट। गटई एकदम्मे सोझ, जइसे रमलिलवा में रवनवां के गटइया तनलि रहेले। मूड़ी पर दउरी एइसन हैट ओन्हवले बा। 'नाही रे हैट ना, कनटोप हऽ। एगो लइका बहत बा। दोसरका केहुनी से हुरपेटि के कऽहऽ ता– 'चुप सारे, अंगरेजी टोप हऽ।' एगो कहत बा– 'सुनि लेई तऽ मारी।' आंखी पर करिक्का चसमा बा। चसमवा एतना बड़हन बा कि ओसे आधा मुंहवें ढां गइल बा। ओकरी मुंहवा में सिकरेट खौंसल बा। बिना मुंह खोलले भक–भक धुंआ निकसत बा। ओकरी नटइया में बाधे की चामे नीयर छापा वाला मफलर लपटाइल बा।

लइका हैरान। सेयान परेसान। अइसन साहैब तऽ कब्बो नाहीं लउकल रहे। कहवां से उतरल बा ई अजगुत मनई। 'फिल्लिम वाला हऽ काऽ हो?' पाछे से एगो बोलल।

डरेबर बीच गांव में बड़ा पिपरे तर टिकठी रोकि दिहलें। बगल में बइठल अजगुत साहेब से डरेबर पूछलें– 'कहवां चलीं? आपन घर कवनी ओ बाऽ?' साहब के चेहरा पर रोस लउकल। बिना बोलले ऊ कहे लगलें– 'कइसा अनाड़ी है?' डरेबरो टेढ़ा हे बोलल– 'हे साहेब! कहां रोकीं गड़िया?अब जाके साहेब बोललें– यहीं रोको।' गाड़ी रुकि गइलि। लइका चारो ओरि से घेरि लिहलें कुलि। भगत के चरनि पर कुछ जने घमौना लेत रह लें। ऊहो लोग गाड़ी सा साहेब के देखि के जुटि आईल। एक ओर से साहेब नीचे उतर लें। दोसरका ओर से डरेबर उतर लें। डरेबर साहेब टिकठी के पिछुआरे जाके एगो दुआरि खोलि दिहलें तऽ लइका, सेयान सभे भकुआ गइल। टिकठी के पिछुआरे कोठरी बनलि बा। ओहमें से डरेबर लगलें समान निकाले तऽ बक्सा–बगुचा, डोलची से पूरा बजारे लागि गइल।

★★★ पर्यावरण संरक्षण ★★★

- प्रकृति का मत करो शोषण। सब मिलकर बचाव पर्यावरण।।
- धरती की अब यही पुकार पर्यावरण का सब मिल करो सुधार।।
- देश होगा तब विकसित जब पर्यावरण होगा सुरक्षित।
- बच्चों को भी दे यह शिक्षा पर्यावरण की हो कैसे रक्षा।।

डरेबर सब समान उतारि के साहेब के आगे खाड़ हो गइलें। साहेब अपनी सुथ्थन के पिछाडी वाली थइली से एगो बेग निकालि के ओहमें से बड़का लोट डरेबर के हाथे पर धर दिहलें। डरेबर अपनी थइली में से कुछु निकाले लगलें तऽ साहेब हाथे से बरजि दिहलें। डरेबर खुस होके सलाम ठोकलें। साहेब तनिक मूड़ी हिला के जवाब दिहले। डरेबर टिकठी पर बइठि के भुर्रऽ हो गइलें। गांव में अचरज हो गइल। आजु एक्को लइका टिकठी के पाछे दउरि के नाहीं गइलें। कुल्हि लइका बकसा बकुचा के लग्गे खाड़ साहेब के घेरि के अपसे में कुछु बतकही करे लगलें।

!! पर्यावरण बचाये !!

पेड़ लगाओ, पेड़ लगाओ,
हरा भरा जीवन बनाओ।
छाया ये हमको देते है,
फल ये हम सबको देते है।
बाढ़ से हमको बचाते है,
प्रदूषण दूर हटाते हैं,
हम भी पेड़ लगाएगें,
संसार को हरा–भरा बनाएँगे।

गंगा का महत्व

❑ संजय द्विवेदी एवम् सीमा मिश्रा

➠ देश की जल उपलब्धता वार्षिक 1880 बि.क्यू.मी. में से 525 बि.क्यू.मी (वार्षिक बहाव) के अधिकतम 28 प्रतिशत शुद्ध जल उपलब्धता गंगा में है।•••

➠ गंगा की सहायक नदियों – यमुना, सोन, घाघरा, गंडक तथा कोसी का योगदान बेसिन के वार्षिक बहाव का 63 प्रतिशत है।•••

➠ गंगा घाटी (861,404 वर्ग कि.मी.) देश का अत्यधिक बड़ी नदी घाटी रही है। यह क्षेत्र देश के कुल भौगोलिक भू–लेख का 26.3 प्रतिशत है तथा देश की 12 प्रमुख नदी घाटियों के कुल स्रवण क्षेत्र का 34.25 प्रतिशत है।•••

➠ गंगा एक ऐसी नदी रही है जिसके स्रवण क्षेत्र ग्यारह राज्यों में स्थित है तथा जो अपनी 17 सहायक नदियों के साथ 12,690 कि.मी. तक बहती है।•••

➠ उत्तर प्रदेश में नदियों तथा नहरों की लंबाई– 31,200 कि.मी. है। नौकायनीय लंबाई 631 कि.मी., बिहार में है।•••

➠ देश की कुल सिंचित भूमि का लगभग 33 प्रतिशत (16.57 डभ) भाग गंगा तथा इसकी सहायक नदियों से जुड़ा है। गंगा बेसिन में कुल कृषि 20.80 प्रतिशत है।•••

➠ गंगा बेसिन में नहरों द्वारा सकल सिंचित क्षेत्र 8.131 MHa है, जो पूरे देश में नहरों द्वारा सिंचित सकल क्षेत्र का 50. 80 प्रतिशत है।•••

➠ यह घाटी 537 मि. जनसंख्या (2011) को आश्रय देती है जो देश की जनसंख्या का 43 प्रतिशत है।•••

यो देवोऽग्नो योऽप्सु योविश्वं भुवनमाविदेशं । यो औषधिषु यो वन्सपतिषु तस्मैं देवाय नमो नमः।।

जो अग्नि, जल, आकाश, वायु,पृथ्वी से आच्छादित है। तथा जो औषधियों एवं वनस्पति में विद्यमान है। उस पर्यावरण देव को हम नमस्कार करते है।

पर्यावरण प्रदूषण

प्रदूषण के जैव सूचक

❑ विष्णु कुमार, अमित कुमार
एवम् संजय द्विवेदी

Abstract :
Bioindicators are those plants or animals which sense the environmental variations in context of pollution or we can say that those plants or animals which explain the ecosystem's health. Bioindicators can be either plants or animals or microorganisms. Various microorganisms such as blue green algae and many bacillus species known as bioindicators which indicates various types of pollutants such as nitrate and phosphate. Various animals such as frogs and toads, some microscopic protozoans also act as indicator species of many pollutants. Many plants known to act as indicators of pollutants are various lichens, ferns, gymnosperms and angiosperms. With the help of bioindicators we can avoid the dangerous outcomes related to the pollution in the near future. With the help of this article we try to explain how we are aware about health of our environment and how we are able to diagnose the presence of different types of pollutants.

जैव सूचक क्या है ?

हमारे जीवन में कुछ ऐसे भी सूचक है जो पर्यावरण में होने वाले बदलाव के प्रति अत्यन्त संवेदनशील रहते हैं। पर्यावरण में होने वाले बदलाव पेड़–पौधों व जीव–जंतुओं में तुरंत पता चल जाता है ऐसे पेड़–पौधे व जीव–जंतु पर्यावरण में बदलाव के सूचक होते हैं। जैव सूचक ऐसे जीव–जंतु होते हैं जोकि पारितंत्र की स्वस्थता को दर्शाते हैं कुछ जीव जैसे कवक, शैवाल, लाइकेन आदि प्रदूषित या परिवर्तनशील वातावरण के प्रति इतने संवेदन शील होते है कि उनकी जैविक क्रियाओं, भौतिकी एवं शारीरिकी में मापात्मक अंतर दिखने लगते है जो यह दर्शाता है कि उस विशिष्ट जगह पर प्रदूषकों की मात्रा में बदलाव हुआ हैं। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि ऐसी प्रजीतियाँ या प्रजातियों का समूह जिनका व्यव्हार, कार्य अथवा जैविक क्रियाएं/गतिविधियां उस विशिष्ट वातावरण की मात्रात्मक/परिणात्मक स्थिति को बयां करते हैं वह जैव–सूचक कहलाते हैं। उदाहरणार्थ जिन जलशयों/तालाबों या झीलों में अधिक प्रदूषण होता है उनमे शैवालीय ब्लूम (चित्र–2) की स्थिति पैदा हो जाती है जो यह दर्शाता है कि उस विशिष्ट जलाशय/तालाब या झील में प्रदूषकों की अधिकता है। इस प्रकार के शैवालीय ब्लूम में प्रायः नाइट्रेट एवं फॉस्फेट की अधिकता होती है जिसके कारण इनमें नीले हरे शैवाल (ठळ।) अत्यधिक मात्रा में वृद्धि कर जाते हैं। कुछ सूक्ष्मजीवों जैसे बैसिलस एवं जिओबैसिलस का प्रयोग किसी वातावरण की शुद्धता की जाँच के लिए किया जाता है क्योंकि जीव प्रायः कुछ प्रदूषकों के लिए प्रतिरोधी होते हैं जिसके कारण उन प्रदूषकों की उपस्थिति में ये सूक्ष्मजीव आसानी से वृद्धि कर पाते हैं जिस से यह पता चलता है की वह विशिष्ट वातावरण किन प्रदूषकों से दूषित है।

एक अच्छा जैव सूचक वह होता है जो प्रदूषकों की पहचान के साथ–साथ उनकी मात्रा एवं दूसरी अतरिक्त सूचनाओं के बारे में भी समूची जानकारी देता है। जैसे क्लोरेला वल्गैरिस एक प्रकार का हरित शैवाल है जोकि आर्सेनिक (।) की अधिक मात्रा में वृद्धि तो करता ही है और साथ ही साथ यह भी दर्शाता है कि किस अनुमानित मात्रा में आर्सेनिक उस स्थान पर उपस्थित है क्योंकि यह सूक्ष्मजीव आर्सेनिक की 500–10000 ब्रड सांद्रता में अधिक वृद्धि करता है जिससे उस विशिष्ट स्थान पर आर्सेनिक की सांद्रता का भी कुछ हद तक अनुमान लगाया जा सकता है, इसके अलावा अन्य दूसरे भी मापदंड है जिनके बारे में यह सूक्ष्मजीव उपयुक्त अनुमानित सूचना प्रदान करता है।

लाइकेन (चित्र–8) एक अच्छे जैव सूचक का दूसरा उदहारण है जो विभिन्न प्रकार के प्रदूषणों की जानकारी देता है इनमें से सबसे महत्वपूर्ण है वायु प्रदुषण। लाइकेन पेड़ों, चट्टानों अथवा मिटटी की सतह पर उगते हैं, इनके पास जड़ एवं क्यूटिकल का अभाव होता है जिसके कारण ये सभी प्रकार के खनिज तत्वों का अवशोषण सीधे वातावरण से कर लेते है। वायु में उपस्थित टॉक्सिन्स एवं प्रदूषकों का प्रभाव सर्वप्रथम लाइकेन्स पर ही पड़ता है।

किसी भी वातावरणीय प्रदूषक की उपस्थिति का अनुमान वहाँ पर उपस्थित जैव सूचक जीव जंतुओं की तीन तरह की स्थितियों को देखकर पता लगाया जा सकता है– पप भौतिक पपप रासायनिक, पपप. व्यव्हारिक।

विभिन्न प्रकार के जैव सूचक वातावरणीय प्रदूषकों को निम्न प्रकार से इंगित करवाते है–

- कुछ पौधे कुछ विशिष्ट प्रकार की टॉक्सिन की उपस्थिति में वृद्धि करने में असमर्थ रहते हैं।

पताः राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान, लखनऊ–226001 E-mail: drs-dwivedi@yahoo.cco.in

- जैव सूचकों की जनसंख्या का अवकलन करने से भी किसी भी पारितंत्र के स्वास्थ्य का पता लगाया जाता है क्योंकि जैव सूचक जीवों की संख्या वहां की वातावरणीय प्रवणता पर निर्भर करती है कि किस मात्रा में प्रदूषक पदार्थ उपस्थित हैं (चित्ररू1)।
- मछलियों में कुछ लीवर एंजाइम का श्रावण भी ज्यादा प्रदूषकों की उपस्थिति में बढ़ जाता है।
- प्रदूषकों की अधिकता के कारण उस विशिष्ट स्थान पर उपस्थित जीवों में शारीरिक, जैविक तथा व्यावहारिक बदलाव आ जाते हैं।
- **USA** के एक अध्ययन में यह भी देखा गया कि प्रदूषकों की आधिक्यता के कारण वहां पर उत्परिवर्तित मेंढकों की संख्या में काफी इजाफा हुआ।
- किसी पारितंत्र में कुछ सूक्ष्मजीव भी टॉक्सिन्स के प्रति जैव सूचक का कार्य करते हैं एवं कुछ सूक्ष्मजीव प्रदूषकों द्वारा तनाव की स्थिति में कुछ तनाव रोधी प्रोटीन्स का निर्माण करते हैं, इन तनाव रोधी प्रोटीन्स का अवकलन करके हम पता लगा सकते है के उस जगह पर कितनी संभावित मात्रा में प्रदूषक पदार्थ उपस्थित होंगे।
- जैव सूचक के पास विभिन्न प्रकार की योग्यता होती है जैसे जनसँख्या/समुदाय/पारितंत्र में औसतम दर्जे के बदलाव में ही इसकी जैविक गतिविधियों में मापक अंतर दिखने लगते हैं।
- इनका पर्याप्त स्थानीय आबादी घनत्व होता है परन्तु जब पर्यावरण में प्रदूषकों की मात्रा बढ़ती है तो इनके स्थानीय आबादी घनत्व में अंतर आ जाता है।
- स्वाभाविक रूप से होने वाले जैव सूचक का उपयोग पर्यावरण के स्वास्थ्य का आकलन करने के लिए किया जाता है और ये पर्यावरण में परिवर्तनों का पता लगाने के लिए भी एक महत्वपूर्ण उपकरण है।

जैव सूचक के प्रकार

जैव सूचकों को वर्तमान में विभिन्न संगठनों (The World Conservation Union, International Union for Conservation of Nature) द्वारा जैव अनुवीक्षण (Biomonitoring) के प्रबन्धन एवं मानव प्रभावों का मूल्यांकन करने के साधनों के रूप में उपयोग और प्रचारित किया जाता है। जैव सूचकों को चित्र–3 में संक्षिप्त में वर्णित किया गया है। जैव सूचक मुख्यतः तीन प्रकार के होते हैं–

1. सूक्ष्मजीव जैव सूचक
2. जन्तु जैव सूच
3. पादप जैव सूचक

सूक्ष्मजीव जैव सूचक

सूक्ष्मजीव जलीय एवं थलीय दोनों पारितंत्र के स्वास्थ्य को इंगित करते हैं इनकी अधिक मात्रा के कारण दूसरे जीवों की अपेक्षा ये सुगमता पूर्वक नमूने के तौर पर लिए जा सकते हैं कुछ सूक्ष्मजीव कैडमियम (Cd) और बेंजीन के संपर्क में आने पर स्ट्रेस प्रोटीन्स का निर्माण करने लगते हैं। पर्यावरण मानव का ही नहीं बल्कि और भी बहुत से जीवों का स्थल है, इनकी प्रतिक्रियाओं के कारण वातावरण में विभिन्न प्रकार के अपशिष्ट पदार्थ उत्पन्न

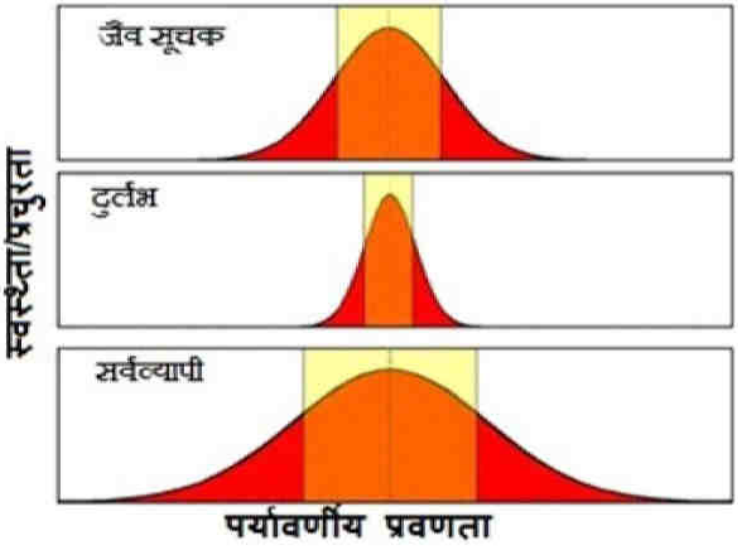

चित्र 1: पर्यावरणीय प्रवणता एवं प्रचुरता में संबंध

चित्र 2: शैवालीय ब्लूम (अ) व फ्लो चार्ट (ब) (स्रोतः गूगल)

होते हैं इन अपशिष्ट पदार्थों की प्रत्यक्षता का मापन करने के लिए विभिन्न प्रकार के जीव उपस्थित होते हैं उनमे सूक्ष्मजीव सबसे महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। यदि इन अपशिष्ट पदार्थों/ प्रदूषकों की मात्रा में वृद्धि होती है तो कुछ सूक्ष्मजीवों की संख्या या तो बढ़ जाती है या फिर कम हो जाती है ये इस बात पर निर्धारित करता है कि वह सूक्ष्मजीव उस प्रदूषक के प्रति संवेदनशील है या प्रतिरोधी। जल में घुलनशील मरकरी आयन्स (Hg2+) बहुत ही हानिकारक होते हैं। मरकरी आयन खाद्य श्रंखला में प्रवेश कर जाते है एवं जीवों पर विभिन्न प्रकार से हानिकारक प्रभाव डालते हैं। थायोबैसिलस स्पीसीज मर्करी के लिए एक अच्छा जैव सूचक है ये बैक्टीरिया हानिकारक मरकरी (Hg2+) को ऑक्सीकृत कर देते हैं। अतः मरकरी आयन्स की उपस्थिति में ये बैक्टीरिया अत्यधिक वृद्धि करते हैं।

सूक्ष्मजीवों की सहायता से किसी स्थान पर गैस के होने का भी पता लगाया जा सकता है। इस प्रक्रिया को माइक्रोबियल प्रॉस्पेक्टिंग फॉर ऑयल एंड गैस (MPOG) कहा जाता है। MPOG के लिए उपयोग की जाने वाली तकनीकों में डीएनए विश्लेषण, संवर्द्धन कोशिका में हाइड्रोकार्बन के उपभोग (ब्यदेनउचजपवद) की मात्रा, आदि मुख्य हैं। यूग्लीना ग्रैसिलिस एक कशाभिका युक्त चलित सूक्ष्म प्रोटोजोआ है। यद्यपि

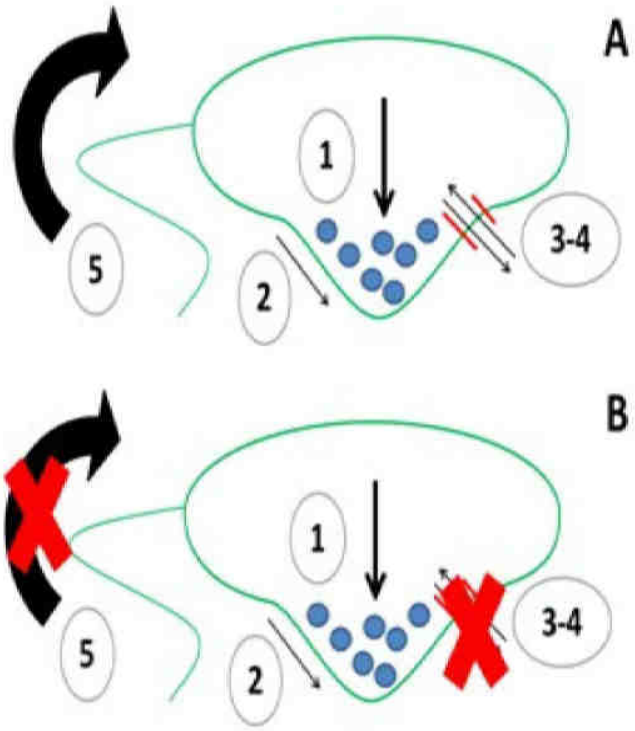

चित्र:4 सूक्ष्म प्रोटोजोआ यूग्लीना ग्रैसिलिस की गुरुत्वाकर्षणीय प्रक्रिया(।) प्रदूषकों की अनुपस्थिति में (ठ) प्रदूषकों की उपस्थिति में (स्रोत– विकिपीडिया)।

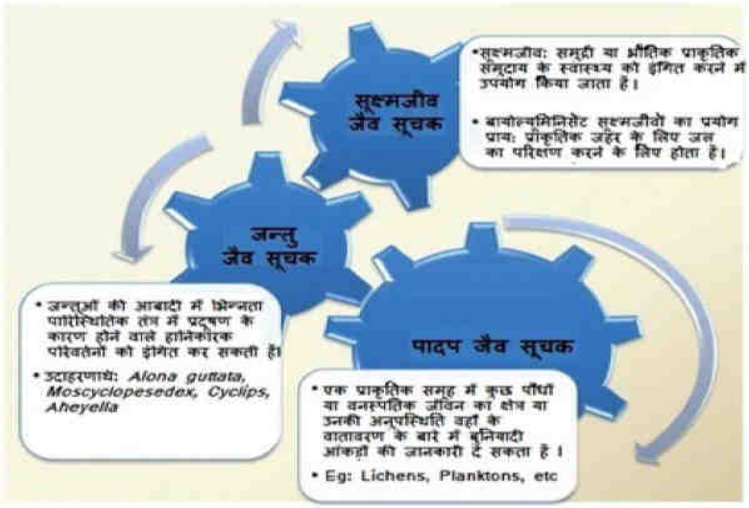

चित्र:3 जैव सूचक के प्रकार (गूगल चित्र के बाद संशोधित किया हुआ)

यूग्लीना अम्लता के प्रति सहनशील है लेकिन यह भारी धातुओं या कार्बनिक और अकार्बनिक यौगिकों के प्रति अत्यंत संवेदनशील है एवं इस प्रकार के वातावरणीय तनाओं के प्रति अत्यंत सीघ्रता एवं संवेदनशीलता के साथ प्रतिक्रिया करता है (चित्र–4)।

समुद्री या ताजे जल में बहुत ही तेजी से शैवालों की मात्रा का बढ़ना ही शैवालीय ब्लूम कहलाता है। शैवालीय ब्लूम मुख्यतः ऐसे जलाशयों एवं झीलों में दिखते हैं जहा नाइट्रेट एवं फॉस्फेट की मात्रा अधिक होती है (चित्र–2) । कुछ सूक्ष्म अकशेरुकीय जल निकायों और स्थलीय पारिस्थितिकी तंत्र के स्वास्थ्य को इंगित करने के उपयोगी और सुविधाजनक संकेत होते हैं। ये प्रायः अत्यधिक मात्रा में पाए जाने वाले एवं अति सुगमता से परखे जा सकने वाले सूक्ष्म अकशेरुकीय जीव होते हैं। इनकी

चित्र 5: टेरिस विटाटा

चित्र 6: मॉस कैडमियम वायु प्रदूषण के उपयोगी जीव हैं

संवेदनशीलता के आधार पर सुगमता से किसी पारिस्थितिक तंत्र के स्वास्थ्य को पहचाना जा सकता है।

जंतु जैव सूचक

जन्तुओं की संख्या में बदलाव यह दर्शाता है कि वह स्थान प्रदूषित है। चाहे वह संख्या कम हुई हो या बढ़ी हो। उदाहरणार्थ जैसे कुछ पौधों की संख्या में प्रदुषण की वजह से कमी आयी है तो इन पर आश्रित रहने वाले जंतुओं की संख्या में भी कमी आ जाती है। इसके विपरीत में अगर किसी विशिष्ट प्रजाति के जंतुओं की संख्या में अत्यधिक वृद्धि हुई है तो इसका अर्थ है कि किसी अन्य प्रजाति के जंतु की संख्या में कमी हुई होगी या उसका पतन हुआ होगा। दूसरे शब्दों में हम कह सकते है कि तनाव की वजह से उत्पन्न घातक प्रभाव जीवों की शारीरिकी, रूपरेखा एवं व्यव्हार में बदलाव आ जाते हैं जोकि उनकी जनसँख्या पर सकारात्मक या नकरात्मक प्रभाव डालते हैं। इस तरह की घातक प्रतिक्रियाओं को हम "प्रारंभिक चेतावनी सिग्नल" की तरह प्रयोग कर सकते हैं और यह अनुमान लगा सकते हैं कि भविष्य में जनसँख्या किस प्रकार की प्रतिक्रिया दे सकती है। उभयचर मुख्यतः मेंढक एवं टोड्स को प्रदूषकों का अध्ययन करने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। मेंढक एवं टोड्स मुख्यतः एनूरोन्स (।दनतंदेद्ध वंश के प्राणी हैं। एनूरोन्स अपनी त्वचा एवं लार्वा गिल झिल्ली के माध्यम से विषैले रसायनों को अवशोषित करते हैं एवं पर्यावरण में इन बदलाव के प्रति संवेदनशीलता दिखाते हैं। इनकी त्वचा बहुत ही पारगम्य होती है जिससे विषैले रसायन इनकी त्वचा के अंदर प्रवेश कर जाते हैं इसी कारण इनको वातावरणीय कारकों के लिए एक मॉडल जीव की तरह प्रयोग कर सकते हैं। केचुए भी बहुत अच्छे जैव सूचक होते हैं एक खोज में यह देखा गया कि केचुए की दो प्रजातियों (एलोलोबोफोफोरा कैलिगिनोसा और लुंब्रिकस रूबेलस) को 2,3,7,8–TCDD के 5 पीपीएम में 85 दिनों तक रखा गया परन्तु इन पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा लेकिन जब इन प्रजातियों को 2, 3, 7, 8–TCDD के 10 पी.पी.एम. में रखा गया तो दोनों प्रजातियों की मृत्यु हो गयी क्योंकि ये जीव TCDD के 5 पीपीएम के प्रति कम संवेदनशील हैं। इस प्रकार केचुओं की उपस्थिति / अनुपस्थिति विभिन्न खाद्य श्रृंखलाओं में जैव प्रतिदीप्तिकरण का एक संभावित मार्ग हो सकता है।

पादप जैव सूचक

पौधे जंतुओं की तरह अपने स्थान से विचरित नहीं हो सकते हैं इसी कारण इनका जीवन उनके आस पास के वातावरण पर निर्भर करता है एवं ये अपने इस वातावरण के प्रति विभिन्न प्रकार की प्रतिक्रियाएं करते हैं जब भी कभी पर्यावरणीय घटक जैसे तापमान, मिट्टी के पानी की मात्रा, पोषकतत्व और वायु प्रदूषक की मात्रा सामान्य से बढ़ जाती है तो वहाँ के पौधों में कुछ आसामान्य लक्षण या आसामान्य वृद्धि दिखने लगती हैं। ऐसे असामान्य लक्षण या विकास की स्थिति पर्यावरणीय प्रदूषण के खतरों को अनुमानित करने के अच्छे संकेतक लक्षण हैं। सल्फरडाइ ऑक्साइड, नाइट्रोजन ऑक्साइड, ओजोन, पेरोक्सीएसिटिल नाइट्रेट, हैलोजन और अम्ल वर्षा जैसे कई वायु प्रदूषक पौधों को नुकसान पहुंचा सकते हैं। इसलिए, पौधे इन वायु प्रदूषणों की अत्यधिक सांद्रता की उपस्थिति का पता लगाने के लिए एक उत्कृष्ट अलार्म सिस्टम प्रदान करते हैं और अक्सर वायु प्रदूषित होने वाले सबूत प्रदान करते हैं। पौधों की प्रतिक्रिया, विशेषरूप से पत्ते के लक्षण, लंबे समय से वायु प्रदूषण के संकेतक के रूप में इस्तेमाल किया जा रहा है। इसके अलावा, धातु संचय की मात्रा का उपयोग भी जैवसूचक के रूप में प्रयोग किया गया है। पर्यावरणीय

चित्र 7: लाइकेन्स (लोबेरिया पल्मोनेरिया), चित्र 8: (अ) तम्बाकू का स्वस्थ पौधा (ब) ओजोन की अधिकता को दर्शाता हुआ (स्रोत: गूगल चित्र)

पर्यावरणीय परिस्थितियों की निगरानी के लिए उपयोग किए जाने वाले पौधों को पादप जैव सूचक कहा जाता है। जैव सूचक वायु प्रदूषकों की उपस्थिति को दर्शा सकते हैं एवं इनके आधार पर वायु प्रदुषण के क्षतिग्रस्त स्तर की आवृत्ति को भी दर्शा सकते हैं। कई प्रकार के पौधे जैव अनुवीक्षक हैं, जिनमें मॉसेस, लाइकेन्स, पेड़ की छाल, पेड़ के छल्ले और पत्तियां शामिल हैं। कवक भी संकेतक के रूप में उपयोगी हो सकते हैं। टेरिस विटाटा (चित्र 5) एक विशेष प्रकार का फर्न है जोकि आर्सेनिक की अधिक मात्रा को इंगित करता है। टेरिस विटाटा ऐसा पहला पौधा है जो आर्सेनिक का अत्यधिक मात्रा में संचयन करता है। इसकी खोज के पश्चात विज्ञान जगत में आर्सेनिक के

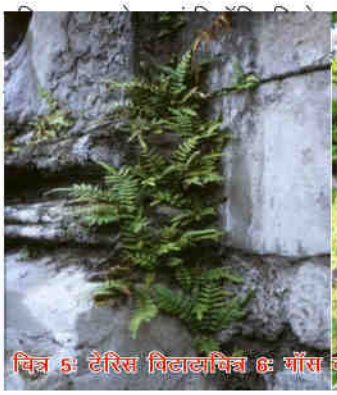

चित्र 5: टेरिस विटाटा

चित्र 6: मॉस कैडमियम वायु प्रदूषण के उपयोगी जीव हैं

मॉस (चित्र 6) कैडमियम धातु का सुगमता से उपयोग करके उसके विषैले प्रभाव को निष्क्रिय कर देते हैं। मॉस को वायु प्रदुषण का एक अच्छा जैव सूचक माना जाता है।

लाइकेन्स (चित्र7) कवक एवं शैवाल का संगम रूप है। ये प्रायः चट्टानों एवं पेड़ों के तनों पर पाए जाते हैं। लाइकेन्स की अनुपस्थिति पर्यावरणीय तनाव जैसे सल्फर डाई ऑक्साइड का उच्च स्तर, सल्फर आधारित प्रदूषक, नाइट्रोजन ऑक्साइड्स, इत्यादि को दर्शाती है। वायु प्रदुषण के प्रति संवेदनशील कुछ महत्वपूर्ण प्रजातियों में तरबूज, खरबूजा, खीरे, स्क्वैश, आलू, आदि प्रमुख हैं।

वायु प्रदूषण के लिए आम तौर पर इस्तेमाल की जाने वाली जैव-वैज्ञानिक प्रजातियों का विवरण :

ओजोन के लिए:

पेटूनिया (केवल कुछ किस्में), ग्रीन बीन (सी.वी. बुश ब्लू लेक 290), तंबाकू (सी. वी. बी. एल डब्ल्यू–3),

फ्लोराइड्स के लिए:

पोंडेरोसा पाइन।

अल्फाल्फा, सफेद पाइन (केवल कुछ स्ट्रेन्स), बीन (सी.वी. ओ.एस.यू. 1604), ग्रीष्मकालीन क्रूकनेक स्क्वैश।

परॉक्सीएसिटिल नाइट्रेट (PAN) के लिए: पेटूनिया (कुछ सफेद–फूल वाली किस्में)।

निष्कर्ष: जैव सूचक एक वह मॉडल है जो किसी पारिस्थितिकी तंत्र या इसके महत्वपूर्ण घटकों में से एक हो सकता है। इनकी उपस्थिति या अनुपस्थिति पर्यावरणीय गतिविधियों के आकलन की एक विधि हो सकती है जो पर्यावरण पर होने वाले नकारात्मक प्रभावों की निगरानी या पता लगाने के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकती है। यह तकनीक इस तरह के हानिकारक प्रभावों को रोक सकती है या कम कर सकती है और वातावरण में भविष्य में आने वाली समस्याओं से जीवों को आगाह करने में सहायक हो सकती है और साथ ही साथ यह भी सुनिश्चित करने में सहायक होगी कि ऐसी विषम परिस्थितयों में जैव सूचकों की सहायता से इन प्रदूषकों से कैसे निजात मिल

औषधीय पौधे

आयुर्वेदिक औषधियों हेतु धन्वन्तरि वाटिका

❑ संजय द्विवेदी एवम् सीमा मिश्रा

पाश्चात्य चिकित्सा पद्धति के प्रभाव में हमारी देशी चिकित्सा पद्धतियां लुप्त हो रही है; जिसके कारण स्थानीय वनस्पतियों के औषधीय गुण के ज्ञान को लोग भूलते जा रहे हैं। ऐसे में औषधीय वनस्पतियों के संरक्षण–संवर्धन की चेतना लुप्त हो रही है और लोग लकड़ी, शोभा और छाया की दृष्टि से ही वृक्षारोपण कर रहे हैं। हाल के तीन–चार दशकों में हम सबके आस पास से अनेकानेक औषधीय पेड़–पौधे लुप्त हो गये और उनके स्थान पर बाहर से लाये पेड़–पौधों की बहुतायत हो गयी जिनका हमारे स्वास्थ्य पर कितना प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है, अब इसके मूल्यांकन की आवश्यकता समीचीन हो गयी है। बाहरी पौधो की कुछ प्रजातियों की पालेन एलर्जी का मानव स्वास्थ्य के दुष्प्रभावों की जानकारी का ही प्रसार हो सका है, जबकि इसका प्रभाव श्वसन तंत्र पर गम्भीर रूप से पड़ता है।

पौधों का औषधीय प्रभाव उनके आसपास के वातावरण में विसरित होता रहता है। जाते समय यात्रा में इमली की छाया का सानिध्य लेने के फलस्वरूप बीमार पड़ जाने व लौटते समय नीम वृक्ष के सानिध्य से स्वस्थ्य हो जाने वाले यात्री की कथा सभी जानते हैं। टी0बी0 सेनिटोरियम चीड़ के जंगलों के पास बनाये जाते हैं, पीपल वृक्ष की छाया में गौतम बुद्ध को बोध प्राप्त हुआ, हरण वृक्ष की छाया का प्रभाव दस्तावर होता है इत्यादि। औषधीय पौधो के इन सारे गुणों का पुराणों में वर्णन किया गया है।

उपरोक्त तथ्यों से स्पष्ट है कि हमारे आपपास के पेड़–पौधे हमारे स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं, अतः हमें अपने चारों तरफ स्वच्छ और स्वस्थ वातावरण बनाने के लिए औषधीय गुणों से भरपूर पेड़–पौधों को अधिक से अधिक रोपण करना चाहिए।

औषधीय वृक्षों के सम्पर्क से स्वास्थ्य लाभ व आवश्यकता पड़ने पर उनसे ताजी औषधि प्राप्त करने की सुगमता 'धन्वन्तरि **''वाटिका' के स्थापना''** की अवधारणा की मूल सोच है।

धन्वन्तरिः मान्यता है कि धन्वन्तरि को साक्षात भगवान विष्णु का अवतार और आयुर्वेद का आदि प्रवर्तक कहा जाता है जो समुद्र मन्थन के समय अमृत कलश एवं वनस्पति लेकर प्रकट हुए थे, और इन से ही आयुर्वेद का प्राकट्य हुआ। वह आयुर्वेद जिसका मुख्य उद्देश्य प्राणी मात्र के स्वास्थ्य की रक्षा एवं रोगियों के रोग का निवारण करना है।

धन्वन्तरि वाटिकाः ज्ञातव्य है कि आयुर्वेद के महत्व को दृष्टिगत रखकर सर्वप्रथम राजभवन, उत्तर प्रदेश में आयुर्वेद के प्रवर्तक भगवान धन्वन्तरि के नाम पर महामहिम श्री राज्यपाल की प्रेरणा के 'धन्वन्तरि वाटिका' की स्थापना की गयी, जिसका उद्घाटन दिनांक 24 फरवरी, 2001 को उन्होंने वाटिका में कुछ औषधीय पौधे रोपित कर किया। इस अवसर पर उन्होंने कहा कि आयुर्वेदिक औषधियों के महत्व को प्रतिपादित करने तथा इन औषधियों के उपयोग को जन–जन तक पहुंचाने के लिये आवश्यक हैकि जगह–जगह आयुर्वेदीय औषधि वाटिकाओं की स्थापना की जाय

Address : Plant Ecology and Climate Changes Division, CSIR-National Botanical Research Institute, Rana Pratap Marg, Lucknow-226001, India; e-mail.: drs_dwivedi@yahoo.co.in; seema_mishra2003@yahoo.co.in

और उसमें जड़ी–बूटी एवं आयुर्वेदीय औषधि पौधें रोपित कर उनके बारे में जानकारी
दी जाय।

रोपण प्रजातियां : पौधों की सभी प्रजातियां, सभी जगह नहीं उगतीं। शोध से ज्ञात हुआ है कि प्रतिकूल परिवेश में उगाने पर उनके औषधीय गुणों में काफी कमी आ जाती है अतः स्थानीय वैद्यों, आयुर्वेद चिकित्सकों व परम्परागत औषधि ज्ञाताओं से जानकारी कर स्थानीय महत्व के ऐसे औषधीय पौधों को रोपित करना चाहिए जो वहां आसानी से जीवित रह सकते हों। वाटिका में रोपित किये जा सकने वाले कुछ औषधीय पौधों का उल्लेख उन के विशिष्ट गुणों सहित किया जा रहा है।

सुझाव :

♦ धन्वन्तरि वाटिका में रोपित औषधीय पौधों की स्थानीय व वैज्ञानिक नाम पट्टिका लगायी जानी चाहिए ताकि लोगों में इन औषधीय पौधों का ज्ञान बढ़े।

♦ धन्वन्तरि वाटिका में रोपित औषधीय पौधों के औषधीय गुण पर पत्रक, फोल्डर या पुस्तिका छपवा कर जन सामान्य में वितरित किया जाना चाहिए ताकि लोगों में पौधों के औषधीय गुण का ज्ञान बढ़े।

क्र.स	पौधो के नाम	औषधीय गुण
1	आँवला	रसायन, वृष्य ग्राही
2	सीता अशोक	रक्तप्रदर, वात व्याधिशामक
3	नीम	रक्तशोधक
4	अर्जुन	हृद्य, वल्य, कासनाशक
5	बेल	ग्राही, रक्तातिसार
6	जामुन	मूत्र संग्रहणीय, मधुमेहनाशक
7	मौलश्री	दन्तशूलहर, सिरशूलनाशक
8	मीठीनीम	छीपनपाचन, प्रवाहिका
9	कचनार	गण्डमालानाशक, मेदोरोग
10	अमलताश	चर्मरोग हर, दाहशामक
11	निर्गुण्डी	वातहर, वातव्याधि नाशक, क्षयरोग हर
12	अडूसा (वासा)	कास, श्वासरोगहर
13	हरसिंगार	ज्वर व कास नाशक
14	गुड़हल	कामोत्तेजक
15	गुलाब	त्रिदोषघ्न, शीतवीर्य
16	पपीता	पाण्डु, अजीर्ण, चर्मरोग नाशक
17	गिलोय	ज्वरहर, मूत्रजनन, विषघ्न
18	शतावरी	नेत्ररोग, शुक्रमेह, अपस्मार
19	तुलसी	ज्वरघ्न, विषमज्वर
20	नागरमोथा	पाचक, अजीर्ण, बिबन्ध
21	अदरक	आमवात, कफनाशक
22	हल्दी	रक्तशोधक
23	केला	रक्तपित्त, बल्य
24	अश्वगंधा	यकृतरोग, कामला, उदरविकार
25	घृतकुमारी	उदररोग नाशक
26	ब्राह्मी	मानसिक रोग नाशक
27	भुंई आँवला	यकृत रोग, उदरविकार नाशक
28	पुनर्नवा	मूत्र शोधक पाण्डु कामला
29	हरड़	पाचन, मृदुरेचक
30	बहेड़ा	ग्राही, मृदुरेचक, श्वास रोग शामक

पृथ्वीपुर अभ्युदय समिति लखनऊ
का
द्वितीय वार्षिक अधिवेशन

1 सितम्बर 2018 को ठाकुर हरिकेश प्रताप सिंह इंटर कॉलेज, दुदही के प्रांगण में पृथ्वीपुर अभ्युदय समिति, लखनऊ का द्वितीय वार्षिक अधिवेशन संपन्न हुआ। इस अधिवेशन में श्री राजीनंदन राय, जिला जज जमशेदपुर, बिहार मुख्य अतिथि थे। इसकी अध्यक्षता लखनऊ विश्वविद्यालय के अवकाश प्राप्त प्रोफेसर उमेश वशिष्ठ ने की थी। इस विचार गोष्ठी में किसानी, छोटे व्यापार एवं ग्रामीण शिक्षा की समस्याओं पर चर्चा हुई। प्रोफेसर उमेश वरिष्ठ एवं श्रीमती अनुराधा सिंह को क्रमशः राजदेवी सिंह दूर दर्शिता सम्मान एवं मौलश्री देवी ग्राम गौरवी सम्मान दिया गया। कुमारी आरती गुप्ता एवं श्री अनिल कुमार यादव को युवा वर्ग में विक्रम सिंह कर्मठता पुरस्कार एवं पृथ्वीपुर तेजस्विता पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इसके अतिरिक्त 4 मेधावी बालिकाओं एवं 2 बालकों को रूपया तीन हजार प्रतिवर्ष की वार्षिक छात्रवृति दी गयी। छात्रों, शिक्षकों, स्थानीय लोगों के साथ साथ क्षेत्रीय पत्रकारों ने गोष्ठी में सक्रिय भागीदारी दिखाई। कुछ चयनित स्थानीय लोगों एवं पत्रकारों को भी उनके अच्छे कार्यो के लिए सम्मानित किया गया।

हिन्दुस्तान 06

आधुनिक खेती करने से समृद्ध होंगे किसान

वार्षिक अधिवेशन

Society for Environment and Public Health (SEPH) Lucknow

Society for Environment and Public Health (SEPH)
Email: sephindia@gmail.com
"स्वच्छ पर्यावरण–स्वस्थ समाज"
Agenda of the "SEPH"

संस्था के प्रमुख कार्य क्षेत्र

- पर्यावरण संरक्षण, वृक्षारोपण एवं स्वास्थ्य के प्रति जनजागरूकता
- पर्यावरण संरक्षण हेतु पर्यावरण मित्र तकनीकी का प्रचार प्रसार
- प्राकृतिक संसाधनों (नदी, पर्वत, वन एवं झील) का संरक्षण
- स्वास्थ्य एवं पर्यावरण से सम्बधित सर्वेक्षण, आंकड़ो का संकलन एवं प्रकाशन

स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर